स्वदेशी पत्रिका

वर्ष–21, अंक–3, फाल्गुन–चैत्र 2069, मार्च 2013

संपादक
विक्रम उपाध्याय

कार्यालय
धर्मक्षेत्र, सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022 से प्रकाशित
दूरभाष : 011–26184595
स्वदेशी जागरण समिति की ओर से ईश्वर दास महाजन द्वारा कॉम्पीटेंट बाइन्डर्स (प्रिंटिंग यूनिट), नवीन शाहदरा, दिल्ली–32 से मुद्रित।

आवरण कथा–4

विदेशी निवेश के प्रबल समर्थक पी. चिदंबरम अब विदेशी निवेश की अच्छाईयों–बुराईयों के तर्कों से आगे बढ़ गए है। अब इस बात की चर्चा नहीं करना चाहते कि विदेशी निवेश देश के लिए अच्छा है या बुरा।

अनुक्रम

आवरण कथा
विदेशी निवेश की मजबूरी का आगाज देता बजट
– डॉ. अश्विनी महाजन /4

बजट समीक्षा
न महंगाई का इलाज, न मंदी की दवा
– आलोक पुराणिक /6
बजट में आम आदमी का कोई फायदा नहीं
– यशवंत सिन्हा /8
फर्क करना चाहिए था किसान व एग्री बिजनेस कंपनियों में
– देविन्दर शर्मा /10
बजट में दिल्ली के लिए कुछ भी खास नहीं मिला
– डॉ. अन्नापूर्णा मिश्रा /10

टिप्पणी : अमीरों को वित्तमंत्री का संदेश : हमीं ने दर्द दिया है, हमीं दवा देंगे
– विक्रम उपाध्याय /11

एक नज़र रेल बजट पर : कमजोर बुनियादी ढांचे पर रेल
– जयंतीलाल भंडारी /12

अर्थव्यवस्था : वित्तीय घाटे के हिस्सों का मूल्यांकन कीजिए
– डॉ. भरत झुनझुनवाला /13

कृषि : सुरक्षित रहे किसानों की आय
– देविन्दर शर्मा /15

भ्रष्टाचार : भ्रष्टाचार नहीं लूट. . .
– ब्रह्म चेलानी /17

सामयिकी : हेलिकॉप्टर सौदे पर सवालों का घेरा
– वेदप्रताप वैदिक /19

सुरक्षा : सुरक्षा पर गहराते सवाल
– बलवीर पुंज /21

पर्यावरण : घातक होता वायु प्रदूषण
– पंकज चतुर्वेदी /23

मुद्दा : दूर है सबके लिए स्वास्थ्य का लक्ष्य
– भारत डोगरा /25

अंतर्राष्ट्रीय : बाजार बना चीन का हथियार
– निरंकार सिंह /27

असमानता : उच्च शिक्षा में असमानता
– डॉ. सूर्यप्रकाश अग्रवाल /30

विचार–विमर्श : सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के ऑडिट में कटौती का प्रावधान अर्थव्यवस्था के लिए घातक
– सीए सुरिन्द्र आनन्द /32

पाठकनामा /2, रपट /34

पाठकनामा

गृहमंत्री को गलत बयानबाजी करना शोभा नहीं देता

स्वदेशी पत्रिका जनवरी माह के अंक में आक्रोश से जगी उम्मीद लेख पढ़कर बड़ी खुशी हुई। लेकिन कुंभकरण की नींद सोयी सरकार व नेताओं को कौन जगाए!! प्रजातंत्र के इस देश में न्याय तंत्र इतना कमजोर है कि आज दुष्कर्मी न्यायतंत्र के सहारे निचली कोर्ट से लेकर सुप्रीम कोर्ट तक पहुंच जाता है। निचली कोर्ट से सुप्रीम कोर्ट तक पहुँचने का समय 20 से 30 साल तक लग जाता है, तब तक कोर्ट–कचहरी के चक्कर लगाकर न्याय मांगने वाला भी थक चुका होता है। लेकिन जीत दुष्कर्मी, भ्रष्टाचारी, गुण्डा तत्व, ठग इन्हीं लोगों की होती है। क्योंकि ये लोग साम–दाम–दण्ड–भेद आदि तरीके अपनाकर या तो न्यायपालिका को अपने पैसों के दम पर खरीद लेते हैं या फिर अपना राजनीतिक दबाव, अन्य हथकण्डे अपनाकर खुलेआम जनता में घूमते हैं। फिर भी हमारी सरकार उन लोगों को बराबर का सम्मान अधिकार देती है। एक कहावत है 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' यानी की जिसके पास पैसा, राजनीतिक पहुंच वही भ्रष्टाचारी, दुराचारी, दुष्कर्मी जेल में भी एसी व सुविधा युक्त समय यापन करता है। उसे सजा का अहसास भी नहीं होता जैसा हमारी सरकार ने अभी हाल ही में आतंकवादियों के जेल में रखने के लिए करोड़ो रुपए खर्च किए हैं। दूसरी तरफ गरीब व्यक्ति को दूसरी तरफ दो वक्त की रोटी कमाने के लिए पीढ़ी–दर–पीढ़ी निकल जाती है फिर भी गरीब गरीब ही रहता है। हमारे गृहमंत्री शिंदे जी राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ व विश्व हिन्दू परिषद के कार्यकताओं को आतंकी बताने में भी नहीं चूकते। कितनी शर्म की बात है जहां कांग्रेस सरकार को आज घूसखोरी, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, महंगाई इन समस्याओं पर ध्यान देना चाहिए था वही वोट बैंक के खातिर गलत–गलत बयानबाजी कर रही हैं। आज आरआरएस और विश्व हिन्दू परिषद नहीं होता तो शायद देश की संस्कृति और भाईचारा भी नहीं होता। आरआरएस और विश्व हिन्दू परिषद् देश की पहचान है और इसके खिलाफ गलत बयानबाजी करना देश के खिलाफ ही है।

– मुरलीधर अग्रवाल, विहिप जिला कोषाध्यक्ष हाऊसिंग बोर्ड कालोनी, हनुमानगढ़ जक्सन (राज.)

यमुना बचाओ अभियान

अब यमुना को बचाने के लिए हजारों लोगों का कारवां दिल्ली की ओर चल पड़ा है। यह यात्रा भगवान श्रीकृष्ण की जन्मभूमि मथुरा से शुरू हुई दिल्ली तक पहुंचेगी। साधु–संतों और राजेन्द्र सिंह (जल पुरुष) के नेतृत्व में शुरू हुई इस यात्रा में हजारों लोग शामिल हुए हैं। इससे यह बात साबित होती है कि आज भी यमुना के प्रति लोगों की संवेदना मरी नहीं है। इसे केवल धार्मिक भावना के कारण जुड़ाव भर कहना बहुत बड़ी गलती होगी। वास्तव में यह आंदोलन केवल यमुना के लिए नहीं, बल्कि अपने सभी प्राकृतिक संसाधनों के लिए है। इसमें जल संसाधन यानी नदी, ताल, पोखरे और झीलें ही नहीं, जंगल–जमीन से लेकर आसमान तक सब कुछ इसमें शामिल है। अपनी प्राकृतिक संपदा के प्रति आमजन की यह चेतना आश्वस्त करती है। आंदोलनकारियों को याद है कि दो साल पहले भी सरकार ऐसे ही वादे कर चुकी है। आज तक उन वादों की दिशा में एक कदम भी आगे नहीं बढ़ा जा सका। इसलिए अब वे सरकार को उसके पुराने वादे याद दिला रहे हैं। बेहतर होगा कि सरकार इस दिशा में गंभीर हो। ताकि आम जनता में उसके प्रति विश्वास का माहौल बने।

– उमेश कुमार सरीन, सेक्टर–3, आरके पुरम्, नई दिल्ली

आवश्यक नहीं कि इस अंक के भीतर प्रस्तुत लेखकों के विचार स्वदेशी पत्रिका के संपादक मंडल के विचारों से मेल खाते हों। पाठकों की जानकारी के लिए उन्हें यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

संपादकीय कार्यालय

''धर्मक्षेत्र'' शिव शक्ति मन्दिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

दूरभाष : 011–26184595 • ई–मेल : swadeshipatrika@rediffmail.com

अगर आप घर बैठे स्वदेशी पत्रिका चाहते हैं तो डिमांड ड्राफ्ट, मनीऑर्डर अथवा चेक द्वारा शुल्क *'स्वदेशी पत्रिका'* दिल्ली के नाम भेजने का कष्ट करें।

वार्षिक सदस्यता शुल्क : 150 रुपए

आजीवन सदस्यता शुल्कः 1500 रुपए

यदि शुल्क भेजने के उपरांत भी आपको पत्रिका समय पर उपलब्ध नहीं हो पा रही है तो तुरंत पत्रिका कार्यालय को सूचित करें।

या आप सीधे बैंक ऑफ इंडिया, खाता नं. 602510110002740

IFSC : BKID 0006025 (Ramakrishnapuram)

उन्होंने कहा

जिस देश में प्रदर्शनकारियों को पुलिस पीटती हो वहाँ की सरकार का मुखिया मैं नहीं रह सकता।

– बोरोसोव, बुल्गारिया के प्रधानमंत्री

अगले दो से तीन महीने में लोकसभा चुनाव होंगे। अगर किसी को लगता है कि बंगाल की रेल परियोजनाएं रोक देगा, तो वह गलत है। यदि जरूरत पड़ी तो रेल मंत्रालय फिर से हमारे पास आ सकता है।

– ममता बनर्जी

हम सभी समर्थकों को साथ लेकर कुश्ती बचाओ अभियान में शामिल होने की अपील करता हूँ। कुश्ती को 2020 ओलंपिक से बाहर करने से कई पहलवानों के सपने टूट जाएंगे।

– सुशील कुमार

मेरे अहिंसक विरोध की आवाज नेताओं को सुननी चाहिए। मैं जानना चाहती हूं कि एक आम आदमी के मौलिक अधिकार देने में सरकार डर क्यों रही है।

– इरोम शर्मिला, अनशनकारी

कश्मीरी पंडितों की समस्याओं पर इसलिए ध्यान नहीं दिया जाता क्योंकि वे बंदूक नहीं उठाते। हमारे समुदाय का बड़प्पन है कि हम तलवार नहीं कलम उठाते हैं।

– अनुपम खेर

कांग्रेस पार्टी का दूसरा नाम महंगाई पार्टी है। यह पार्टी केवल महंगाई बढ़ाना जानती। जब तक ये लोग सत्ता में हैं महंगाई दिन–प्रति–दिन बढ़ती ही जाएगी।

– नीतिश कुमार

संपादकीय

भ्रमित चिदंबरम, दिशाहीन बजट

जब पी चिदंबरम बजट भाषण दे रहे थे तो उनके मन में एक बात स्पष्ट थी कि अगले वर्ष आम चुनाव होने वाले हैं। सरकार के पास शायद ही कोई मौका मिले जिससे वे वोटरों और खासकर किसी संभावित नये सहयोगी को रिझा सके। साथ में वे भी जानते थे कि आर्थिक मुद्दे पर विपक्ष को नीचा दिखाने का भी उन्हें अब और अवसर नहीं मिलने वाला। इसलिए उन्होंने अपनी ओर से कोई कसर नहीं छोड़ी। आम जनता चाहे वह मध्य वर्ग हो या निम्न वर्ग इस सरकार से पूरी तरह त्रस्त है, उसे तत्काल राहत चाहिए, पर 9 साल के शासन में सप्रंग अंदर से इतनी खोखली हो चुकी है कि उसके पास न राहत प्रदान की इच्छा–शक्ति बची है और न उसके पास पर्याप्त साधन, इस स्थिति को समझते हुए चिदंबरम ने भौतिक नहीं मानसिक सुकून की दवा निकाली। उन्होंने गरीबों को यह समझाया – देखों सरकार गरीब नहीं अमीर विरोधी है। एक करोड़ से अधिक प्रतिमाह कमाने वालों पर हमने दस फीसदी अधिक आय कर का भार लगा दिया। फिर खुद ही बोल पड़े – एक सौ बीस करोड़ जनता में से सिर्फ 44 हजार लोग ही हैं, जो एक करोड़ से अधिक का आयकर रिर्टन भरते हैं। उन्होनें यह तो नहीं बताया कि ये 44 हजार लोग कौन हैं, पर आपको मालूम होना चाहिए इसमें अधिकतर वे लोग हैं जिनका कमाई का जरिया एक नहीं कई है और जो अपनी आय का अधिकांश हिस्सा आयकर विभाग की नजर में लाते ही नहीं। इनमें फिल्म स्टार, बड़े खिलाड़ी, बड़े वकील और कुछ हद तक पब्लिक लिमिटेड कंपनी से मोटी तनख्वाह उठाने वाले लोग। अब कोई वित्त मंत्री से पूछे इतने कम लोगों पर लागू अतिरिक्त आयकर से देश का कितना भला होगा? क्या यह सिर्फ गरीबों को भरमाने या उन्हें समझाने की असफल चेष्टा नहीं है कि सरकार अमीरों की पक्षधर नहीं है। हाँ उन्होंने बजट में आम मतदाता को एक दो हजार रुपये का कर छूट का झुनझुना जरूर पकड़ाया कि अगले साल तक बजाते रहो और सप्रंग सरकार का 'गुण' गाते रहे। चिदंबरम को मालूम है कि 44 हजार अति रईस से अतिरिक्त कर लेकर खजाने का भला नहीं हो सकता, देश तो आम आदमी के पैसे से ही चल सकता है। लिहाजा उन्होंने प्रत्यक्ष कर के बजाय अप्रत्यक्ष कर का सहारा लिया। हर उस उत्पाद या सुविधा को महंगा कर दिया जिसका उपयोग निम्न या मध्य आयवर्ग करता है। खाना पीना, घूमना, परिवार को किसी रेस्तरां में ले जाना सब पर अतिरिक्त भार। एक बात और चिदंबरम के महंगाई बढ़ाने के फैसले से चीनी मोबाईल की मांग जरूर बढ़ जाएगी। दो हजार से ऊपर के मोबाइल पर अतिरिक्त उत्पाद शुल्क का फायदा चीनी उत्पादक खूब उठाएंगे। हालांकि आम बजट का उद्देश्य देश की आर्थिक स्थिति का आकलन और आने वाले समय के लिए वित्तीय प्रावधान करना होता है पर कांग्रेस ने चिदंबरम को इस बजट में राजनीतिक हित साधने का भी दायित्व दिया था। कांग्रेस बजट के जरिए गुजरात के आर्थिक मॉडल को नकारना चाहती थी और सहयोगियों के बीच तेजी से खो रही विश्वसनीयता को पुनः प्रतिस्थापित करना चाहती थी। गुजरात के आकड़ों और परिणामों का सामना कांग्रेस नहीं कर पा रही है, इसलिए चिदंबरम ने इस बजट में विकास के पैमाने को बदलने का प्रयास किया। अनावश्यक यह बहस ख़ड़ा करने का जतन किया कि विकास का पैमाना उद्योग, धंधे, रोजगार या व्यापार नहीं है, बल्कि सामाजिक दायित्व और सामाजिक सुरक्षा भी है। वित्त मंत्री ने बजट भाषण के जरिए यह भ्रम पैदा करना चाहा कि गुजरात में सिर्फ उद्योगपतियों और व्यापारियों का विकास हुआ है। अपनी असफलता को दूसरे की सफलता से तौलने की कोशिश में चिदंबरम शायद इस तथ्य को भूल गए, कि 9 वर्ष के शासन काल में केंद्र सरकार के प्रति उद्योग जगत का विश्वास कभी नहीं बना। नीतियों की खिचड़ी बनाने और सरकारी खजाने को हजम कर जाने के कारण ही भारत का निवेश ग्राफ उपर नहीं आ पाया। कांग्रेस को गुजरात का विकास मॉडल इसलिए नकारना है कि उन्हें नरेन्द्र मोदी की लोकप्रियता से अगले साल के चुनाव में लोहा लेना है। विवादों और आरोपों की राजनीति असफल हो चुकी है, इसलिए आर्थिक नीति पर एक नई लड़ाई कांग्रेस शुरू करना चाहती है। चिदंबरम ने बजट के जरिए ममता का विकल्प टटोलने का भी प्रयास किया है। कांग्रेस की नजर बिहार पर है और उसको नीतिश कुमार में कुछ संभावनाएं दिख रही हैं। इसलिए विशेष पैकेज का दाव बजट में खेला गया है। बंगाल की मांग पूरी नहीं होने के कारण ही ममता का मोह भंग हुआ था, बिहार को बजट में क्या मिलेगा यह देखने वाली बात होगी। फिलहाल चिदंबरम ने बजट के जरिए कांग्रेस के प्रबंधकों को राजनीतिक निहितार्थ निकालने का बड़ा लक्ष्य दे दिया है। इससे ज्यादा चिदंबरम बजट में कर भी नहीं सकते थे।

आवरण कथा

विदेशी निवेश की मजबूरी का आगाज देता बजट

विदेशी निवेश के प्रबल समर्थक पी. चिदंबरम अब विदेशी निवेश की अच्छाईयों–बुराईयों के तर्कों से आगे बढ़ गए है। अब इस बात की चर्चा नहीं करना चाहते कि विदेशी निवेश देश के लिए अच्छा है या बुरा। इस बजट में उन्होंने साफ कर दिया कि विदेशी भुगतान घाटा चिंता का विषय है और हमें तुरंत 75 अरब डॉलर चाहिए और वो उसके लिए एफ.डी.आई., संस्थागत निवेश और विदेशी बाजार से गुहार लगाएंगे।

■ डॉ. अश्विनी महाजन

बजट 2013–14 संसद में पेश हो चुका है। गौरतलब है कि यह यूपीए की दूसरी पारी का आखिरी बजट है, क्योंकि 2014 में सरकार 'वोट ऑन एकाउण्ट' ही प्रस्तुत कर पायेगी। संयोग से यूपीए की पहली पारी के अंतिम बजट को भी 2008 में वर्तमान वित्तमंत्री पी. चिदंबरम ने ही पेश किया था। वित्तीय आंकड़ों को लोकलुभावन रूप में प्रस्तुत करने की अपनी उस्तादी के लिए पहले से ही पी. चिदंबरम प्रसिद्ध है।

यह बात अलग है कि वित्तमंत्री संसाधनों की दृष्टि से इस बार उतने भाग्यशाली नहीं है जितना वे 2008 में थे। वर्ष 2008 में बजट पेश करते हुए वर्ष 2007–08 का राजकोषीय घाटा जीडीपी का मात्र 3.1 प्रतिशत ही था। महंगाई तो थी, लेकिन इतनी कमरतोड़ नहीं थी। तब पी. चिदंबरम ने बजट पेश करते हुए कहा था कि वे राजकोषीय घाटे को 2.5 प्रतिशत तक ले आयेंगे। लेकिन अमरीका और यूरोप में आर्थिक संकटों के चलते भारी बचाव पैकेजों के कारण 2008–09 में राजकोष की स्थिति काफी डगमगा गई। छठे वेतन आयोग की सिफारिशों और लोकलुभावन किसान ऋण माफी से अर्थव्यवस्था भारी संकट में आ गई है। राजकोषीय घाटा 6.0 प्रतिशत पहुंच गया। और उसके बाद आने वाले बजटों में कोई वित्तमंत्री लोकलुभावन नीतियों के रास्ते पर नहीं चल पाया।

कष्टदायक रहा 2012–13

वर्ष 2012–13 में शून्य पर टिकती औद्योगिक विकास दर, कहर ढाती महंगाई, पिछले 12 साल में सबसे कम ग्रोथ रेट, जीडीपी के 6.0 प्रतिशत तक पहुंचता राजकोषीय घाटा और अब तक सबसे बड़ा चालू विदेशी भुगतान शेष का घाटा, अर्थशास्त्रियों, नीतिनिर्माताओं और देशवासियों की रातों की नींद हराम करता रहा है। बीतते साल 2012–13 में सरकार ने कुछ अंधाधुंध आर्थिक फैसले लिए। पेट्रोलियम पदार्थों की सब्सिड़ी पर कुल्हाड़ी सरीखा आघात करते हुए डीजल की कीमतें बढ़ाई गई, सब्सिड़ी युक्त रसोई गैस की उपलब्धता घटाई गई, खुदरा में विदेशी निवेश को अनुमति और इंश्योरेंश और पेंशन फंडों में विदेशी निवेश के रास्ते चौड़ा करने जैसे कुछ महत्वपूर्ण फैसले आर्थिक सुधारों के नाम पर किए गए। बजट में सरकार ने 2012–13 के उन फैसलों को ओर आगे बढ़ाने और डीजल की कीमतों में वृद्धि करने का आगाज दे दिया है।

विदेशी भुगतान घाटे को पाटने की मजबूरी

देश इस समय भुगतान घाटे की भारी समस्या से जुझ रहा है। पिछले वर्ष 2011–12 में भुगतान शेष का घाटा 78 अरब डालर रहा, जो जीडीपी का 4.4 प्रतिशत था। 2012–13 की दूसरी और तीसरी तिमाही में यह घाटा जीडीपी के क्रमशः 5.4 प्रतिशत और 6.0 प्रतिशत तक पहुंच चुका है। ऐसा लगता है कि भुगतान शेष का घाटा 100 अरब डालर को पार कर जाएगा। गौरतलब है कि 1990–91 में जब भारत की अर्थव्यवस्था एक गंभीर भुगतान संकट से गुजर रही थी, तब भी

यह घाटा मात्र 10 अरब डालर से कम का था, जो उस समय की जीडीपी का मात्र 3.2 प्रतिशत ही था। यानि अब समस्या कई गुणा गंभीर है। फर्क केवल इतना है कि उस समय देश के पास पर्याप्त विदेशी मुद्रा भंडार नहीं थे, जबकि अब देश के पास 270 अरब डालर के विदेशी मुद्रा भंडार हैं। लेकिन भुगतान की परिस्थिति यदि इसी प्रकार से बनी रही तो विदेशी मुद्रा भंडार समाप्त होते देर नहीं लगेगी। पिछले कुछ समय से भुगतान संकटों के चलते देश का रूपया लगातार गिर रहा है।

विदेशी निवेश के लिए अब गढ़ा नया तर्क

विदेशी निवेश के प्रबल समर्थक पी. चिदंबरम अब विदेशी निवेश की अच्छाईयों–बुराईयों के तर्कों से आगे बढ़ गए है। अब इस बात की चर्चा नहीं करना चाहते कि विदेशी निवेश देश के लिए अच्छा है या बुरा। इस बजट में उन्होंने साफ कर दिया कि विदेशी भुगतान घाटा चिंता का विषय है और हमें तुरंत 75 अरब डॉलर चाहिए और वो उसके लिए एफ.डी. आई., संस्थागत निवेश और विदेशी बाजार से गुहार लगाएंगे। गौरतलब है कि 2011–12 में देश में मात्र 22 अरब डॉलर का ही प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफ.डी.आई) आया, जबकि ब्याज, रोयल्टी, डिविडेंट जैसी मदों के नामपर कुल 26 अरब डॉलर विदेश चले गए। यानि अब एफ.डी.आई. कोई फायदे का सौदा नहीं रह गया है। भला हो अनिवासी भारतीयों का जिन्होंने इस कालखंड में 65 अरब डॉलर स्वदेश भेजे और भला हो सोफ्टवेयर एक्सपोर्ट का जिससे 56 अरब डॉलर इस कालखंड में प्राप्त हुए। इन दोनों बातों पर वित्तमंत्री का कोई वक्तव्य नहीं है। लेकिन घाटे के सौदे एफ.डी.आई. और एफ.आई.आई. को मजबूरी का नाम देकर वित्तमंत्री और यह सरकार अपने मनमुताबिक नीतियां बनाने में जुट गई है।

कोयला, तेल, सोना इत्यादि के आयातों के बढ़ने को भुगतान घाटे का कारण बताया गया है। लेकिन पिछले 2 वर्षों से लगातार बढ़ते भुगतान घाटे की जिम्मेवारी सरकार की है, जिसे वो ओढ़ना नहीं चाहती। बढ़ते राजकोषीय घाटे की चिंता तो वित्तमंत्री जताते है लेकिन उसे ठीक करने के लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति का पूर्णतया अभाव इस बजट से दिखता है। नरेगा, आवास योजना इत्यादि पर खर्च में वृद्धि वास्तविक नहीं बल्कि मौद्रिक ही है, क्योंकि इस बीच महंगाई की भी भी भरपाई नहीं हो पायेगी।

आम आदमी को लगता था कि भारी राजकोषीय घाटे को पाटने के लिए अब सब्सिड़ी न घटाकर, अतिरिक्त साधन अमीरों पर कर लगाए जायेंगे। कर की छूट सीमा भी बढ़ाई जायेगी, महंगाई को थामने के लिए सरकार खाद्य पदार्थों की महंगाई को लगाम लगायेगी, इंडस्ट्री ग्रोथ बढ़ाने के लिए एक्साईज डयूटी में छूट मिलेगी। लेकिन आम आदमी बजट से निराश ही हुआ है।

विकास को निराश करता बजट

12वीं पंचवर्षीय योजना में पहले से ही 5 सालों में 50 लाख करोड़ रूपये के इन्फ्रास्ट्रक्चर के निवेश की बात कही गई है। वित्तमंत्री ने अपने लफ्जों में इसे 55 लाख करोड़ कहकर कोई खास बात नहीं कही। इन्फ्रास्ट्रक्चर बॉड, भण्डारण के लिए 5 हजार करोड़ और अन्य बातें हर बार जैसी ही है। इन्फ्रास्ट्रक्चर में निजी क्षेत्र की बढ़ती भागीदारी से आम आदमी के कष्ट घटने की बजाय बढ़ ही रहे हैं, और उनके समाधान के लिए कुछ नहीं हो रहा।

पिछले कई वर्षों से मांग के अभाव में इंडस्ट्रीयल ग्रोथ दम तोड़ रही है। ऊंची महंगाई दर के चलते रिजर्व बैंक ब्याज दरें नहीं घटा रहा। रूपये की कमजोरी और बढ़ती लागतों के कारण औद्योगिक लाभ घट रहे हैं और नया निवेश नहीं हो रहा। निवेश बढ़ाने की जरूरत को तो वित्तमंत्री ने रेखांकित किया लेकिन उसके लिए उपायों का कोई खास जिक्र नहीं है। पिछले कुछ समय से सड़क और अन्य इंफ्रास्ट्रेक्चर का विकास थम सा गया है। लूट जैसे उपयोग शुल्कों ने एयरपोर्ट इंफ्रास्ट्रेक्चर में निजी भागीदारी के औचित्य पर सवालिया निशान लगा दिया है। निवेश का सारा दामोदार विदेशी निवेश पर छोड़ने की बात हो रही है। अर्थव्यवस्था में घरेलू निवेश बढ़ाने की दरकार है। उसके लिए कोई ठोस कदम दिखाई नहीं देता।

खाद्य सुरक्षा हेतु 10,000 करोड़ का प्रावधान सही कदम है। लेकिन आम आदमी को लगता था कि भारी राजकोषीय घाटे को पाटने के लिए अब सब्सिड़ी न घटाकर, अतिरिक्त साधन अमीरों पर कर लगाए जायेंगे। कर की छूट सीमा भी बढ़ाई जायेगी, महंगाई को थामने के लिए सरकार खाद्य पदार्थों की महंगाई को लगाम लगायेगी, इंडस्ट्री ग्रोथ बढ़ाने के लिए एक्साईज डयूटी में छूट मिलेगी। लेकिन आम आदमी बजट से निराश ही हुआ है। एक करोड़ की बजाए 50 लाख की आमदनी वालों को सुपर अमीर माना जाता तो जरूर राजकोष की हालत सुधर पाती। ❑

न महंगाई का इलाज, न मंदी की दवा

यह बजट इस सरकार के सामने मौका था कि वह कुछ जोखिम भरे कदम लोगों के सामने पेश कर सकती थी। जोखिम के कुछ सकारात्मक परिणाम आ सकते थे। पर यह कुछ भी ठोस करता नहीं दिखता– न निवेशक के लिए, न उपभोक्ता के लिए, न उद्यमियों के लिए। इसीलिए शेयर बाजार ने भी इसे नकारात्मक तौर पर ही लिया है।

■ आलोक पुराणिक

बजट आया और चला गया, आर्थिक सर्वेक्षण ने जो उम्मीदें जगाई थीं, उन्हें पूरा किए बगैर। आर्थिक सर्वेक्षण से पता चला था कि सरकार विकास और महंगाई को महत्वपूर्ण मसलों के तौर पर चिह्नित करती है। पर इन दोनों ही मोर्चो पर बजट कुछ करता नहीं दिखता है। खाने–पीने की चीजें उतनी ही महंगी हैं, जितनी बजट से पहले थीं। बजट से मिडिल क्लास के लिए कोई खास राहत की खबर नहीं है।

तमाम अनुमानों को दरकिनार करते हुए वित्तमंत्री पी. चिदंबरम ने 2013–14 के लिए पेश बजट में टैक्स स्लैब में कोई बदलाव नहीं किया है। पांच लाख तक की सालाना आमदनी वालों को दो हजार रुपये की टैक्स छूट मिली है। चिदंबरम ने दो से पांच लाख रु पये आय वर्ग के टैक्स पेयर्स को टैक्स में 2,000 रुपये की छूट देने की घोषणा की।

उन्होंने कहा कि इसके आधार पर टैक्स फ्री इनकम की सीमा को 2.20 लाख रुपये माना जा सकता है। वित्तमंत्री ने व्यक्तिगत टैक्स पेयर्स के लिए एक करोड़ रुपये से अधिक की टैक्सेबल इनकम पर 10 फीसद सरचार्ज लगा दिया। यह कदम अमीरों की जेब से रकम निकालता हुआ दिखता है, पर वित्तमंत्री के पास कर वसूली के और तरीके मौजूद थे। अगर उन्हें अपनाया जाता, तो वे खाने–पीने की तमाम चीजों पर कर कम करके उन्हें सस्ता कर सकते थे।

देश में 12 करोड़ लोगों के पास पैन कार्ड है और सिर्फ साढ़े तीन करोड़ लोग ही कर रिटर्न भर रहे हैं। इसकी वजहों की तलाश कर टैक्स वसूली में बेहतरी की जा सकती थी। सिगरेट महंगी हुई है और दो हजार रुपये से अधिक कीमत वाले मोबाइल फोन पर एक्साइज ड्यूटी एक प्रतिशत से बढ़ाकर छह फीसद कर दी गई। इसके अलावा एजुकेशन पर तीन फीसद सेस जारी रखा गया है।

आर्थिक सर्वेक्षण ने चिंता जताई थी कि महंगाई, खासतौर पर खाने–पीने की चीजों में महंगाई आसमान पर है। पर यह महंगाई बजट बाद कम होती नहीं दिखती। वित्तमंत्री खाने–पीने की चीजों समेत, रोज के लिए जरूरी कई चीजों पर कर कम करके यह संदेश दे सकते थे कि वह महंगाई कम करने के लिए प्रतिबद्ध हैं। पर बजट किसी भी खाने–पीने की चीज को सस्ता नहीं करता।

मोबाइल महंगा होगा, यह टेलीकाम उद्योग के लिए बुरी खबर है, जो पहले ही परेशानियों से जूझ रहा है। आर्थिक सर्वेक्षण ने बताया था कि हाल दरअसल ठीक नहीं हैं। कुछ दिनों पहले जिस अर्थव्यवस्था के आठ से दस प्रतिशत तक के विकास की बात हो रही थी, उसके 2013–14 में 6.1 से 6.7 प्रतिशत विकसित होने का अनुमान लगाया जा रहा है।

2012–13 में तो पांच प्रतिशत से

ज्यादा विकास की संभावना नहीं दिख रही है। मोटे तौर पर आर्थिक सर्वेक्षण में पांच बड़े मसले दिखाई दिए थे – विकास दर, महंगाई, औद्योगिक विकास, नौकरियां और ग्लोबल स्थितियां। बजट इन सबमें कुछ खास करने की स्थिति में दिखायी नहीं देता। विकास दर पांच प्रतिशत रहेगी, केंद्रीय सांख्यिकी संगठन के इस अनुमान पर कुछ दिन पहले वित्त मंत्रालय की तरफ से एतराज किया गया थे, पर अब यह साफ हो गया है कि 2012–13 में पांच प्रतिशत से ज्यादा विकास दर नहीं रहने वाली है। 2013–14 में यह बढ़कर छह प्रतिशत से ऊपर कैसे हो जाएगी, इसका कोई साफ जवाब सर्वेक्षण में नहीं है।

यूं भी सर्वेक्षण सिर्फ सवाल उठा सकता है, जवाब तो बजट में या अन्य आर्थिक घोषणाओं में ही दिए जाते हैं। बजट इस बारे में कोई जवाब देने में विफल रहा है। विकास के लिए निवेश को कैसे प्रोत्साहित किया जाएगा, इस पर बजट में कुछ नहीं मिलता। वित्तमंत्री ये तो रोना रो रहे हैं कि विदेशी निवेश आना चाहिए, पर देशी–विदेशी निवेश को प्रोत्साहित करने के कोई कदम बजट में नहीं दिखते हैं।

आर्थिक सर्वेक्षण ने चिंता जताई थी कि महंगाई, खासतौर पर खाने–पीने की चीजों में महंगाई आसमान पर है। पर यह महंगाई बजट बाद कम होती नहीं दिखती। वित्तमंत्री खाने–पीने की चीजों समेत, रोज के लिए जरूरी कई चीजों पर कर कम करके यह संदेश दे सकते थे कि वह महंगाई कम करने के लिए प्रतिबद्ध हैं। पर बजट किसी भी खाने–पीने की चीज को सस्ता नहीं करता।

आर्थिक सर्वेक्षण ने यह भी बताया कि औद्योगिक क्षेत्र के महत्वपूर्ण हिस्से मैन्युफैक्चरिंग सेक्टर में लगातार गिरावट आ रही है। 2011–12 में मैन्युफैक्चरिंग सेक्टर में विकास दर 2.7 प्रतिशत थी। इसके 2012–13 में गिरकर 1.9 प्रतिशत रहने के आसार हैं। 2009–10 में यह 11.3 प्रतिशत थी और 2010– 11 में यह 9.7 प्रतिशत हुई।

स्पष्ट है कि मैन्युफैक्चरिंग सेक्टर की कंपनियां त्राहि–त्राहि कर रही हैं। वे ब्याज दर कम करने की मांग कर रही हैं। पर ब्याज दर कम तब होगी, जब महंगाई दर कम हो। रिजर्व बैंक महंगाई की चिंता में ब्याज दरों को कम करने के लिए तैयार नहीं है। महंगाई कम करने में बजट ने कोई योगदान नहीं दिया, इसलिए यह उम्मीद निर्थक है कि आने वाले महीनों में रिजर्व बैंक ब्याज दरों में कोई कमी करने के लिए प्रेरित होगा। रोजगार के नाम पर बजट में 'मनरेगा' के लिए करीब 33,000 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया है। मनरेगा के जरिए जिंदा रहने भर का जुगाड़ तो हो जाता है, पर इसके जरिये उत्पादन और बेहतर रोजगार का सृजन नहीं हो रहा है।

आर्थिक सर्वेक्षण के मुताबिक रोजगार बढ़ रहा है, पर चिंताजनक बात यह है कि रोजगार की गुणवत्ता बहुत खराब है। कंस्ट्रक्शन जैसे कारोबारों में मजदूर स्तर का कारोबार बढ़ना किसी भी अर्थव्यवस्था के लिए राहत की बात नहीं है। ठेके के मजदूर, दिहाड़ी मजदूर और असुरक्षा के मारे कर्मी किसी भी अर्थव्यवस्था का चमकता चेहरा नहीं होते। नौकरियों के अवसरों की गुणवत्ता लगातार खराब हो रही है। ऑटोमोबाइल जैसे उद्योगों के विकास की तेज रफ्तार के साथ ठीक–ठाक नौकरियां बढ़ने के आसार हैं।

ऑटोमोबाइल में भी स्पेशल यूटीलिटी व्हीकल महंगे हुए हैं। यह इस उद्योग के लिए ठीक नहीं है। एक्सपोर्ट की स्थिति भी बेहतर नहीं है। आर्थिक सर्वेक्षण ने बताया कि बदलती हुई ग्लोबल स्थितियों में उन उद्योगों के मामले में भारत को गहरी प्रतियोगिता का सामना करना पड़ेगा, जिनमें भारत की स्थिति हाल तक काफी मजबूत रही। बिजनेस प्रोसेस आउटसोर्सगि (बीपीओ) के मामले में फिलीपींस, ब्राजील और चीन, भारत को जोरदार प्रतिस्पर्धा दे रहे हैं।

पिछले पांच सालों में बीपीओ बाजार में भारत का दस प्रतिशत हिस्सा ये देश छीनकर ले गए हैं। इन देशों के मुकाबले के लिए भारत में तैयारियां कायदे से नहीं की गई तो भविष्य में इस क्षेत्र में भारत के पिछड़ने की आशंका बनेगी। पर बजट में इन तमाम चिंताओं की कोई झलक नहीं दिखाई पड़ती। सॉफ्टवेयर या बीपीओ सेक्टर के लिए यह कोई विशिष्ट योजना बजट पेश नहीं करता। कुल मिलाकर यह बजट इस सरकार के सामने मौका था कि वह कुछ जोखिम भरे कदम लोगों के सामने पेश कर सकती थी। जोखिम के कुछ सकारात्मक परिणाम आ सकते थे। पर यह कुछ भी ठोस करता नहीं दिखता– न निवेशक के लिए, न उपभोक्ता के लिए, न उद्यमियों के लिए। इसीलिए शेयर बाजार ने भी इसे नकारात्मक तौर पर ही लिया है।

उम्मीद की जानी चाहिए कि आने वाले दिनों में महंगाई कम हो जाए, वित्तमंत्री के बिना कुछ किए ही और फिर रिजर्व बैंक ब्याज दरें गिरा दे, सरकार के बिना कुछ किए ही। जब ठोस कदम बजट में न दिखें, बजट के बाहर भी न दिखें, तब तो अर्थव्यवस्था को उम्मीदों पर ही कायम रहना पड़ता है। ❑

बजट में आम आदमी का कोई फायदा नहीं

बजट का खामियाजा आज आम जनता को ही भुगतना पड़ेगा। जनता पर महंगाई का बोझ कम होता नहीं दिखता। एक आकलन है कि खाद्यान्न की कीमतों में दस फीसद की वृद्धि होने से पांच करोड़ लोग गरीबी रेखा के नीचे चले जाते हैं। अपने देश में लगभग तीन वर्षो तक महंगाई की दर 4 से पांच फीसद के बीच रही है।

■ **यशवंत सिन्हा**

आज अर्थव्यवस्था की हालत कैसी है और इसके लिए कौन जिम्मेदार है। उसके बाद ही सही तरीके से यह समझ पाएंगे कि यह बजट इन समस्याओं को दूर कर सकेगा या नहीं। सरकार खुद स्वीकार कर रही है कि आर्थिक दुर्गति है। राजस्व घाटा चरम पर है, महंगाई से राहत नहीं है, महंगे कर्ज से आम जनता से लेकर उद्योग तक परेशान हैं, चालू खाते का घाटा इतना ज्यादा है कि देश की साख दांव पर लग गई है।

ताजे आंकड़े बता रहे हैं कि आर्थिक विकास दर तीसरी तिमाही में घटकर 4.5 फीसद पर आ गई है। ये सारे संकेतक बेहद खतरनाक हैं और इनके लिए पूरी तरह से संप्रग की नीतियां जिम्मेदार हैं। इस हालत के बीज संप्रग–एक ने अपने कार्यकाल के अंतिम वर्ष 2008–09 में डाले थे जब चुनाव को देख कर लगभग दो लाख करोड़ रुपये का अतिरिक्त खर्च कर दिया।

एक वर्ष में राजकोषीय घाटा 2.5 फीसद से बढ़ कर 6 फीसद हो गया। उससे महंगाई बढ़ी और महंगाई बढ़ी तो रिजर्व बैंक को ब्याज दरें बढ़ानी पड़ीं। दो–तीन वर्षो तक ब्याज दरों के ज्यादा रहने से नए निवेश आने बंद हो गए। इससे आर्थिक विकास दर घट कर पांच फीसद से नीचे आ गई है।

मेरा मानना है कि जब आप खुलकर गलती स्वीकार करें तभी उसका निदान संभव है। दुर्भाग्य से संप्रग सरकार ऐसा नहीं कर रही। सितंबर, 2012 में प्रधानमंत्री ने यह स्वीकार किया था कि अर्थव्यवस्था के हालात वर्ष 1991 जैसे हैं, लेकिन बजट में सिर्फ आंकड़ों की बाजीगरी की गई है। देश के सामने जो चुनौतियां हैं उन्हें दूर करने की कोई कोशिश नहीं है। राजकोषीय घाटे को 5.2 फीसद पर सीमित करने का दावा किया गया है और मैं इसके लिए वित्तमंत्री को धन्यवाद देता हूं, लेकिन इसके लिए योजनागत व्यय में 95 हजार करोड़ रुपये की कटौती की गई है। इनमें से कई कटौतियां आम आदमी, समाज के पिछड़े वर्ग के हितों को ताक पर रख कर की गई हैं।

महंगाई का ही मुद्दा लीजिए। खाद्यान्न आपूर्ति को बेहतर करने का कोई रोडमैप वित्तमंत्री नहीं दे पाए हैं। ढांचागत क्षेत्र में वित्त सुविधा बढ़ाने की बात है, लेकिन इससे जुड़ी परियोजनाओं के रास्ते में आने वाली प्रशासनिक अड़चनों को दूर करने की घोषणा नहीं है।

सुस्त होती अर्थव्यवस्था में रोजगार बढ़ाने की कोई मंशा भी नहीं दिखती।

युवाओं व गरीबों का हित तभी सधेगा जब अर्थव्यवस्था तेजी से आगे बढ़ेगी। इन वर्गों के लिए निर्धारित आवंटन में थोड़ी बहुत वृद्धि करने से कुछ नहीं होने वाला। वित्त मंत्री का फोकस इन वर्गो से ज्यादा विदेशी रेटिंग एजेंसियों पर रहा है।

बजट में वित्तीय घाटे को कम करने की कोई ठोस पहल नहीं की गई है इसलिए निवेश कम ही आएगा और अर्थव्यवस्था की खस्ताहाल स्थिति जारी रहेगी। अमीरों, एसयूवी खरीदने वालों और एसी रेस्तरां पर बढ़ाए गए टैक्स का स्वागत करता हूँ।

— डॉ. भरत झुनझुनवाला (अर्थशास्त्री)

उम्मीदों से परे है बजट। सब लोगों को निराशा हाथ लगी। महिला, युवा और गरीब तीन चेहरे बताने वाले वित्तमंत्री ने तीनों के लिए कुछ नहीं दिया। बजट में किसान का चेहरा बिल्कुल भी नजर नहीं आया, न ही आम आदमी का चेहरा दिखा।

— सुषमा स्वराज, (भाजपा)

बजट में 65 प्रतिशत आबादी की उपेक्षा की गई है साथ ही इस बजट से देश के केवल 10 प्रतिशत लोगों का विकास होगा जो पहले से सुविधा संपन्न हैं।

— मुलायम सिंह यादव (सपा)

सबकुछ हवा—हवाई है, कुछ भी नया नहीं है इस बजट में।

— मयावती, (बसपा)

सरकार अर्थव्यवस्था की चुनौतियों से निपटने का कोई भी ठोस उपाय पेश नहीं कर पाई है।

लेकिन वित्तमंत्री मानते हैं कि वैश्विक मंदी की वजह से देश के सामने आर्थिक संकट पैदा हुआ है।

आज सरकार अपनी नाकामी को छिपाने का प्रयास कर रही है। 2008—09 में वैश्विक वित्तीय संकट की आड़ में सरकार ने राजनीतिक रोटियां सेंकी थीं और उसका खामियाजा अर्थव्यवस्था को आज तक भुगतना पड़ रहा है। हाल ही में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आइएमएफ) ने अपनी रिपोर्ट में भारत सरकार के इस दावे को खारिज कर दिया है। इसमें कहा गया है कि भारतीय अर्थव्यवस्था का संकट लगभग पूरी तौर से घरेलू कारणों से पैदा हुआ है। जब आप बगैर सोचे—समझे मनरेगा, किसान ऋण माफी, छठे वेतन आयोग की सिफारिशों को लागू कर उपभोक्ता मांग बढ़ाएंगे और मांग को पूरा करने के लिए आपूर्ति नहीं बढ़ाएंगे तो हालात तो बिगड़ेंगे ही।

हमारी राजग सरकार ने भी मंदी के दौर में शुरुआत की थी। हम अपने अनुभव के आधार पर बता सकते हैं कि अगर वित्तमंत्री कुछ बड़ी परियोजनाओं को तेजी से पूरा करने का ऐलान करते तो उससे अर्थव्यवस्था को लंबी अवधि में फायदा होता। वे नदी जोड़ो योजना या एक साथ 50 या सौ हवाई अड्डों के निर्माण या ग्रामीण क्षेत्रों को बेहतरी क्वालिटी की सड़कों से जोड़ने का ऐलान करते।

रोजाना 30 किलोमीटर सड़कों के निर्माण की स्कीम लागू की जाती। इससे सीमेंट, कोयला, स्टील, बालू, लकड़ी की मांग बढ़ती। निवेशकों को शुभ संकेत जाते और नए निवेश आते। सरकारी व निजी क्षेत्र मिलकर निवेश करते। यह लंबी अवधि में उद्योग के लिए लागत को घटाता। वित्तमंत्री ने ऐसा कुछ नहीं किया है जिससे लगे कि बड़ी परियोजनाओं में निवेश को लेकर सरकार कोई स्पष्ट संकेत दे पाई है। साथ ही उन्हें आम आदमी को बचत करने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए कर छूट के दायरे वगैरह को बढ़ाना चाहिए था।

बजट का खामियाजा आज आम जनता को ही भुगतना पड़ेगा। जनता पर महंगाई का बोझ कम होता नहीं दिखता। एक आकलन है कि खाद्यान्न की कीमतों में दस फीसद की वृद्धि होने से पांच करोड़ लोग गरीबी रेखा के नीचे चले जाते हैं। अपने देश में लगभग तीन वर्षो तक महंगाई की दर 4 से पांच फीसद के बीच रही है।

आर्थिक विकास दर के पांच फीसद से भी नीचे आने की आंच से देश का युवा वर्ग झुलसेगा। आर्थिक समीक्षा में पहले ही बेरोजगारी को लेकर काफी गंभीर चिंता जताई गई है। आठ और नौ फीसद की विकास दर हासिल करने के बावजूद हम पर्याप्त मात्रा में नौकरियां पैदा नहीं कर पा रहे हैं। ब्याज दरों में खास कमी नहीं होने से निवेश का माहौल बनने में भी दिक्कत होगी। आम आदमी और युवा वर्ग के लिए मुझे यह बजट बुरी खबरों वाला दिखाई देता है।

महिलाओं के लिए की गई घोषणाओं को छोड़ दिया जाए तो वित्तमंत्री को बताना चाहिए कि युवाओं—गरीबों को इस बजट से सीधा लाभ कैसे मिलेगा। महिलाओं के लिए बैंक स्थापित करना या अलग फंड बनाना टोकन किस्म की घोषणाएं हैं। युवाओं व गरीबों का हित तभी सधेगा जब अर्थव्यवस्था तेजी से आगे बढ़ेगी। इन वर्गो के लिए निर्धारित आवंटन में थोड़ी बहुत वृद्धि करने से कुछ नहीं होने वाला। वित्त मंत्री का फोकस इन वर्गो से ज्यादा विदेशी रेटिंग एजेंसियों पर रहा है। ❑

फर्क करना चाहिए था - किसान व एग्री बिजनेस कंपनियों में

फर्टिलाइजर सब्सिडी नहीं बढ़ाना अच्छा है। लोग इसकी भले ही आलोचना करें लेकिन मैं इस कदम का स्वागत करता हूँ क्योंकि सब्सिडी घटाने से किसानों का ही नुकसान होता। मैं बुनकरों के लिए भी सस्ते कर्ज के पक्ष में हूँ।

■ देविन्दर शर्मा

वित्तमंत्री ने एक जिम्मेदार बजट पेश किया है। कॉपोरेट जगत भले न खुश हो, लेकिन देश की बाकी जनता के लिए यह बजट थोड़ा ठीक है। कॉपोरेट जगत को उन्होंने निराश नहीं किया है। इस बजट का स्वागत किया जाना चाहिए। इसमें सोशल सेक्टर पर फोक्स किया गया है। वित्त मंत्री जी ने किसानों के लिए कर्ज की राशि तो बढ़ा दी है, लेकिन उन्हें किसान और किसानों के नाम पर फायदा उठाने वाली एग्री बिजनेस कंपनियों में फर्क करन चाहिए था। क्योंकि बजट में घोषित 7 लाख करोड़ में से किसानों के लिए करीब 50,000 करोड़ ही आएंगे।

वित्त मंत्री ने बताया कि हम हर साल 50,000 करोड़ का खाद्यान्न तेल आयात कर रहे हैं। भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा खाद्यान्न आयातक देश बन गया है।

सरकार से मैं आग्रह करूंगा कि वह खाद्यान्न तेल पर इंपोर्ट ड्यूटी को 300 फीसद से 0 फीसदी पर लाए। इसका सीधा फायदा हमारे देश के किसानों के पास जा रहा है वह हमारे देश के किसानों को मिलेगा। वैसे भी 1993–94 में हम खाद्यान्न तेल के मामले में 97 फीसद तक आत्मनिर्भर होने का दम दिखा चुके हैं। तब हमने सिर्फ तीन फीसदी खाद्यान्न तेल आयात किया था।

फर्टिलाइजर सब्सिडी नहीं बढ़ाना अच्छा है। लोग इसकी भले ही आलोचना करें लेकिन मैं इस कदम का स्वागत करता हूँ क्योंकि सब्सिडी घटाने से किसानों का ही नुकसान होता। मैं बुनकरों के लिए भी सस्ते कर्ज के पक्ष में हूँ। वित्त मंत्री ने खाद्य सुरक्षा बिल के मद में 10,000 करोड़ रुपए का प्रावधान किया है। इसका देश को फायदा मिलेगा। राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना का दायरा बढ़ाया गया है। स्किल डेवलपमेंट की बात की गई है। कूड़े से बिजली बनाने पर जोर दिया गया है।❑

बजट में दिल्ली के लिए कुछ भी खास नहीं मिला

दिल्ली में महिलाओं की असुरक्षा पर उठते प्रश्नों को देखते हुए उम्मीद की जा रही थी कि दिल्ली में महिलाओं की सुरक्षा, बेहतर व सुरक्षित ट्रासंपोर्ट प्रणाली इत्यादि के लिए बजट में विशेष प्रावधान किया जायेगा परन्तु बजट इन आशाओं को पूरा करने में पूरी तरह विफल रहा है।

■ डॉ. अन्नपूर्णा मिश्रा

वित्त मंत्री श्री पी चिदमबरम द्वारा ने जो बजट पेश किया है वह बहुत ही निराशाजनक व जनविरोधी है। इस बजट में दिल्ली खासतौर पर दिल्ली की महिलाओं, कमजोर वर्गों के लोगों, अनधिकृत कालोनियों के निवासियों के लिए कुछ भी नहीं है।

दिल्ली में महिलाओं की असुरक्षा पर उठते प्रश्नों को देखते हुए उम्मीद की जा रही थी कि दिल्ली में महिलाओं की सुरक्षा, बेहतर व सुरक्षित ट्रासंपोर्ट प्रणाली इत्यादि के लिए बजट में विशेष प्रावधान किया जायेगा परन्तु बजट इन आशाओं को पूरा करने में पूरी तरह विफल रहा है।

वही दिल्ली में बढती हुयी पानी की किल्लत व गरीब परिवारों के लिए नए मकानों की जरूरत को भी इस बजट में पूरी तरह अनदेखा किया गया है। आज दिल्ली के नागरिक जिस प्रकार अच्छे शिक्षा संस्थानों व प्राथमिक स्वास्थ्य सुविधाओं से वंचित है उसे देखते हुए उम्मीद थी की दिल्ली सरकार द्वारा दिल्ली में शिक्षा व स्वास्थ्य के क्षेत्र के लिए विशेष बजट के लिए केंद्र सरकार पर दबाव डाला जायेगा। ऐसा लगता है कि दिल्ली की मुख्यमंत्री, देश के वित्त मंत्री से दिल्ली के लिए कुछ खास बजट प्रावधान करवाने में विफल साबित हुयी है।

कुल मिलाकर इस बजट में युवाओं, महिलायों, किसानो,कमजोर वर्गों की अनदेखी की गयी है। बजट में कुछ भी नया करने की इच्छा का आभाव भी साफ नज़र आता है। बजट को देखते हुए लगता है कि देश आज जिस प्रकार की आर्थिक चुनौतियों का सामना कर रहा है उसके सामने वर्तमान केंद्र सरकार ने आत्मसमर्पण कर दिया है।

टिप्पणी

अमीरों को वित्तमंत्री का संदेश : हमीं ने दर्द दिया है, हमीं दवा देंगे

पी चिदंबरम को लगता है कि उन्होंने अपने समकक्ष कुछ लोगों की जेब से कुछ अतिरिक्त रुपये देश के नाम पर लेकर गरीबों का बड़ा भला कर दिया है। इसलिए उन्हें अभी से ही पुचकारने में लगे हैं। हाल ही में उनका बयान आया – घबराने की बात नहीं है, अधिभार कभी लगता है कभी हटा दिया जाता है। जरूरी नहीं कि एक साल बाद भी अमीरों पर यह 'बोझ' बरकरार रहेगा।

■ विक्रम उपाध्याय

कुछ हजार उन अमीरों पर, जो एक करोड़ से अधिक सालाना कमाते हैं, उन पर 10 फीसदी अतिरिक्त कर लगाने से खुद वित्त मंत्री आहत हैं। पी चिदंबरम को लगता है कि उन्होंने अपने समकक्ष कुछ लोगों की जेब से कुछ अतिरिक्त रुपये देश के नाम पर लेकर गरीबों का बड़ा भला कर दिया है। इसलिए उन्हें अभी से ही पुचकारने में लगे हैं। हाल ही में उनका बयान आया – घबराने की बात नहीं है, अधिभार कभी लगता है कभी हटा दिया जाता है। जरूरी नहीं कि एक साल बाद भी अमीरों पर यह 'बोझ' बरकरार रहेगा। किसी ने उन्हें यह कहकर डराया कि ये सुपर अमीर लोग बजट के अधिभार से नाराज होकर देश छोड़ देंगे– सो उन्होंने अमीरों को तत्काल समझाया। अमीर भाइयों देखों यहां से अधिभार के कारण जाने की जरूरत नहीं। दुनिया में किसी भी देश में भारत से ज्यादा सस्ते नौकर–चाकर नहीं मिलेंगे। फिर संपन्नता सिर्फ पैसे से नहीं आती, पैसे के अलावा बहुत सारी सुविधाओं से भी आती है जो आप को यहां मिलती हैं।

दरअसल चिदंबरम को इस बात का पछतावा है कि उन्होनें राजनीतिक मजबूरी में अपने ही अमीर 'दोस्तों' का नुकसान कर दिया है। जयपुर के चिंतन शिविर,, जहां राहुल गांधी के राजनीतिक जीवन को अतिरिक्त खाद पानी देने का फैसला कांग्रेसियों ने किया, में ही यह विचार आया कि इस बार के बजट में ऐसा संदेश सरकार दे कि लगे कि राहुल गांधी और सोनिया गांधी गरीबों को लिए बहुत चिंतित है। गरीबों को यह अहसास कराया जाए कि तुम्हारी जरूरत पूरी करने के लिए सरकार अमीरो ंपर 'डाका' डालने के लिए भी तैयार है।

वित्त मंत्री को राहुल गांधी के इस विचार को मानना ही था, पर वह इस असमंजस में पड़ गये कि कहीं आका का हुक्म बजाने में अमीरों का कोपभाजन ही नहीं बन जाए। लिहाजा उन्होंने सांकेतिक रूप में आलाकमान की इच्छापूर्ति का रास्ता निकाला। उनके बजट भाषण के उस अंश पर गौर कीजिए जिसमें उन्होंने एक करोड़ रुपये से अधिक आय वाले पर अधिभार लगाने की घोषणा की – 'आपको बता दूं कि देश में केवल 42 हजार लोग ही ऐसे हैं जो एक करोड़ से अधिक का सालाना आयकर भरते हैं। ' उन्होंने आई रिपीट कह कर फिर से देश को बताया कि केवल 42 हजार लोगों से ही अधिभार वसूला जाएगा। चिदंबरम देश की बेचारगी प्रस्तुत कर रहे थे या अमीरों को यह संदेश देना चाहते थे कि वे अपनी राजनीतिक मजबूरी की सूई बहुत कम लोगों को चुभोना चाहते हैं।

वित्तमंत्री को यह मालूम है कि देश में करोड़पतियों की संख्या कितनी है। उनके मातहत कार्य करने वाले आयकर विभाग के पास इस बात की पूरी जानकारी है कि रातों रात कितने लोग करोड़पति बन जाते हैं। कई राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय अनुसंधान इकाइयां अपनी रिपोर्ट में बता चुकी हैं कि भारत में कितने लोग करोड़पति हैं। पिछले साल प्रकाशित डेलोआइट सेंटर फॉर फाइनेंसियल सर्विसेज ने एक आकड़ा जारी कर बताया था कि वर्ष 2011 में भारत के दो लाख छियासी हजार लोग करोड़पतियों की सूची में थे, और संभावना है कि 2020 तक भारतीय करोड़तियों की संख्या लगभग सात लाख के उपर पहुंच जाएगी। भारत में करोड़पति बनने की विकास दर 143 फीसदी है।

एक और अतंराष्ट्रीय एजेंसी क्रेडिट सूइस रिसर्च इंस्टीट्यूट ने अपनी वैश्विक धनाढ्य रिपोर्ट में बताया कि 2012 तक भारत में एक लाख 58 हजार करोड़पति थे जो 2017 तक दो लाख 42 हजार हो जाएंगे। इन सूची में वे अमीर शामिल हैं जिनके पास पचास लाख से लेकर 300 लाख अमरीकी डॉलर के बराबर की संपत्ति है। इस एजेंसी के अनुसार पूरी दुनिया के एक फीसदी सबसे अमीर लोगों में, जिनके पास अथाह संपत्ति हैं, दो लाख 37 हजार भारतीय शामिल हैं। फिर भी वित्त मंत्रालय को सिर्फ 42 हजार लोग ही मिले जिन पर अतिरिक्त कर लगाया जा सकता है।

हालांकि इसे विडंबना ही कहेंगे कि जिस देश में 120 करोड़ की जनसंख्या हो उसमें कुछ लाख लोगों के पास ही पूरे देश की 50 फीसदी से अधिक की संपत्ति है। 95 फीसदी भारतीयों की आज भी आर्थिक पूंजी 10 हजार अमरीकी डॉलर से भी कम है। वैसे यह भी सच्चाई कि कुल साढ़े तीन करोड़ वे लोग जो आयकर रिटर्न दाखिल करते हैं में से सिर्फ चार लाख लोग ही ऐसे हैं, जो 20 लाख रुपये सालाना से अधिक का आयकर रिटर्न दाखिल करते हैं और उस पर कर देते हैं। कर आधार बढ़ाने और लोगों को कर देने के प्रति प्रोत्साहित करने के बजाय चिदंबरम और कांग्रेस बजट के साथ भी आंख मिचौली का खेल खेले तो भगवान ही मालिक है। ❑

कमजोर बुनियादी ढांचे पर रेल

स्थिति यह है कि संसाधनों के अभाव में विकास की ओर आगे बढ़ने के बजाय भारतीय रेल पिछड़ गई है। पिछले एक दशक में रेलयात्री तो दोगुने हो गए, लेकिन रेलवे कर्मचारियों की संख्या बढ़ने के बजाय करीब ढाई लाख घट गई। यह भी एक वजह है कि पटरियों पर दौड़ती ट्रेन असुविधा और असुरक्षा का पर्याय बन गई है।

■ **जयंतीलाल भंडारी**

रेलमंत्री पवन कुमार बंसल ने रेल बजट में यात्री किराये में प्रत्यक्ष रूप से हालांकि कोई वृद्धि नहीं की है, लेकिन तत्काल टिकट, रिजर्वेशन, कैंसलेशन, सुपर फास्ट ट्रेन में अतिरिक्त चार्ज के कारण यात्री किराया अप्रत्यक्ष रूप से बढ़ जाएगा। इसी तरह माल भाड़ा भी ईंधन सरचार्ज के कारण बढ़ जाएगा। ऐसे में रेल का सफर पहले से महंगा तो हो ही गया है। यह जरूर है कि रेल मंत्री एक ओर सभी वर्गों, मसलन महिला सशक्तिकरण, खिलाड़ियों को रियायतें, युवाओं को नौकरी, वरिष्ठ नागरिकों के लिए प्लेटफॉर्म पर लिफ्ट, वैष्णो देवी जाने वाले तीर्थयात्रियों आदि के लिए सुविधाओं का प्रावधान करते दिखाई पड़े, वहीं भारतीय रेल को 23 घंटे इंटरनेट बुकिंग, रेलवे आरक्षण, वेबसाइट की क्षमता वृद्धि, ई–टिकट प्रणाली तथा आधुनिकीकरण की दिशा में आगे बढ़ने के लिए कदम उठाते हुए भी दिखाई दे रहे हैं।

उन्होंने नए रेल बजट में सैम पित्रोदा द्वारा दिए गए रेल आधुनिकीकरण के सुझावों पर ध्यान दिया है। सीमित संसाधनों के बावजूद जहां उन्होंने देश के विभिन्न क्षेत्रों के लिए 67 नई एक्सप्रेस, 27 पैसेंजर ट्रेनों सहित कई रेलगाड़ियों के फेरे बढ़ाने के प्रावधान किए।

सच्चाई दरअसल यह है कि देश की जरूरत के लिहाज से रेल मार्ग भी कम पड़ रहे हैं। इतना ही नहीं, रेलों की संख्या कम पड़ रही है। रेल में सुविधाओं का भारी अभाव तो खैर है ही। लोकलुभावन राजनीति का परिचय देने के कारण वर्ष 2003 से 2012 तक के रेल बजटों में यात्री किराये में कोई वृद्धि नहीं की गई थी। लालू प्रसाद तथा ममता बनर्जी ने केवल वाहवाही हासिल करने के लिए भारतीय रेलवे को बहुत पीछे छोड़ दिया। देश के विकास में रेलवे का योगदान चूंकि अहम है, अतएव रेलवे के संसाधन बढ़ाने बहुत जरूरी हैं। लेकिन यात्री किराये और माल भाड़े में वृद्धि आगामी लोकसभा चुनाव के मद्देनजर कहीं कड़वाहट देने वाली न बन जाए। इसी मुश्किल के कारण रेल मंत्री खुले रूप से संसाधन नहीं जुटा पाए। संसाधन जुटाने के लिए यात्री किराये और माल भाड़े में बढ़ोतरी की राह निस्संदेह मुश्किल थी।

बजट से पहले यात्री किराये में कुछ वृद्धि करते हुए रेल मंत्री नए बजट में यात्री किराया न बढ़ाने का संकेत दे चुके थे। लेकिन डीजल के दाम में वृद्धि ने उन्हें माल भाड़े पर फ्यूल सरचार्ज लगाने के लिए बाध्य किया। अलबत्ता माल भाड़े में अब तक इतनी अधिक वृद्धि हो चुकी है कि भविष्य में इस बढ़ोतरी का प्रतिरोध देखने को मिलेगा और सड़क के मुकाबले रेल की लगातार घटती हुई हिस्सेदारी में और कमी आएगी।

स्थिति यह है कि संसाधनों के अभाव में विकास की ओर आगे बढ़ने के बजाय भारतीय रेल पिछड़ गई है। पिछले एक दशक में रेलयात्री तो दोगुने हो गए, लेकिन रेलवे कर्मचारियों की संख्या बढ़ने के बजाय करीब ढाई लाख घट गई। यह भी एक वजह है कि पटरियों पर दौड़ती ट्रेन असुविधा और असुरक्षा का पर्याय बन गई है। बढ़ती रेल दुर्घटनाओं की पड़ताल करें, तो ये हादसे मानवीय भूल, रेलवे संसाधनों पर जरूरत से ज्यादा बोझ और नीतिगत खामियों का नतीजा दिखाई देते हैं। समुचित सुरक्षा मानकों की अनुपस्थिति के कारण पिछले कुछ वर्षों में रेल दुर्घटनाएं तेजी से बढ़ी हैं। रेल इंजन, डिब्बों, ट्रैक और सिग्नलिंग सिस्टम की मेंटनेंस और ओवरहॉलिंग का काम पिछड़ता गया है। रेलवे में ओवरलोडिंग बढ़ा दी गई है, लेकिन ट्रैक, पुल और पटरी की मरम्मत पर कोई ध्यान नहीं दिया गया।

पवन कुमार बंसल हालांकि भारी–भरकम धनराशि का इंतजाम नहीं कर पाए हैं। यहां यह भी कहना उपयुक्त होगा कि यदि रेल मंत्री कुछ और कदम आगे बढ़ाकर यात्री सुविधा, सुरक्षा व्यवस्था और रेल के बुनियादी ढांचे के लिए कुछ और कारगर व्यवस्था करते, तो रेल बजट और बेहतर बन सकता था। ❑

रेल बजट में सभी पक्षों की बात को नजरअंदाज कर दिया गया है। रेल किराया तो कुछ समय पहले ही बढ़ा दिया गया था और अब किराया नहीं बढ़ाने का श्रेय लेने का प्रयास किया जा रहा है। मालभाड़े में वृद्धि से महंगाई बढ़ेगी।

– यशवंत सिन्हा (भाजपा)

रेल बजट ने बिगाड़ा रोटी–मकान का गणित। माल भाड़ा बढ़ने से लोहा, सीमेन्ट के साथ–साथ सभी खाने–पीने की चीजें भी महंगी हो जाएंगी।

– भानु प्रताप रावत (एक नागरिक)

वित्तीय घाटे के हिस्सों का मूल्यांकन कीजिए

वित्तीय घाटे को लेकर हमारे सामने दो परस्पर विरोधी चिन्तन उपलब्ध हैं। इस विवाद को अर्थशास्त्री एडमन्ड फेलेप्स ने सुलझाने का प्रयास किया है। इन्हें अर्थशास्त्र के नोबल पुरस्कार से नवाजा गया है। श्री फेलप्स ने बताया कि कीन्स का चिन्तन अल्पसमय के लिये कारगर हो सकता है परन्तु दीर्घकाल में नहीं। फेलप्स ने स्पष्ट किया कि सरकारी खर्च का रोजगार एवं उत्पादन पर सुप्रभाव पड़ना जरूरी नहीं है. . .

■ डॉ. भरत झुनझुनवाला

वित्त मंत्री चिदम्बरम् ने बजट बनाते समय वित्तीय घाटे को नियंत्रण में रखने को प्राथमिकता दी है। लगभग सभी मदों पर खर्च पूर्ववत् रखे गये हैं। साधारण समझ बताती है कि सरकार जितनी रकम टैक्स से वसूल करती है उतना ही उसे खर्च

करना चाहिये। इस स्थिति को 'बैलेन्स्ड' अथवा संतुलित बजट कहा जाता है। ऐसे में वित्तीय घाटा शून्य रहता है। परन्तु इस पॉलिसी को अपनाने से सरकार की आवश्यक निवेश करने की क्षमता सीमित हो जाती है।

संभव है कि सरकार के पास स्वर्णिम चतुर्भुज हाइवे जैसी योजनाओं में निवेश करने के लिये पर्याप्त आय न हो। मसलन सरकार नोट छापकर हाइवे बना सकती है। इस प्रकार से नोट छापकर खर्च करने को 'वित्तीय घाटा' कहा जाता है।

साधारणतः वित्तीय घाटे को अच्छा नहीं माना जाता है। निजी निवेशकों का की अर्थव्यवस्था पर से भरोसा उठ जाता है और वे दूसरे देशों को पलायन कर जाते हैं। वित्तीय घाटे से कुछ लाभ हो तब भी इस विधा को न अपनाना ही उत्तम माना जाता है। यह मान्यता प्रसिद्ध अर्थशास्त्री कीन्स के विचार के विपरीत है।

बात तीस के दशक की है। उस समय अमरीकी अर्थव्यवस्था पर घोर मन्दी छायी हुयी थी। राष्ट्रपति ट्रूमैन ने उस समय बैलेंस्ड बजट नीति को अपना रखा था। मन्दी के कारण सरकार की टैक्स से आय घट रही थी और तदनुसार सरकारी खर्च में वे कटौती कर रहे थे। फलस्वरूप अर्थव्यवस्था में उर्जा का स्रोत नहीं बच रहा था जैसे किसी कमरे का दिया और लालटेन साथ–साथ बुझने लगे।

इस परिस्थिति में कीन्स ने राष्ट्रपति ट्रूमैन को पत्र लिखकर सुझाव दिया था कि वे बैलेंस्ड बजट को छोड़कर नोट छापें, सरकारी खर्च बढ़ायें तथा बाजार में मांग बढ़ायें उसी तरह जैसे मरीज को एन्टीडिप्रिसेन्ट देकर उर्जावान बनया जाता है। राष्ट्रपति ट्रूमैन ने कीन्स के सुझाव को लागू किया। उन्होंने नोट छापकर सरकारी खर्च बढ़ाये। इससे बाजार में मांग बढ़ी और भीघ्र ही अमरीकी अर्थव्यवस्था चल निकली।

वित्तीय घाटे को लेकर हमारे सामने दो परस्पर विरोधी चिन्तन उपलब्ध हैं। इस विवाद को अर्थशास्त्री एडमन्ड फेलेप्स ने सुलझाने का प्रयास किया है। इन्हें अर्थशास्त्र के नोबल पुरस्कार से नवाजा गया है।

श्री फेलप्स ने बताया कि कीन्स का चिन्तन अल्पसमय के लिये कारगर हो सकता है परन्तु दीर्घकाल में नहीं। फेलप्स ने स्पष्ट किया कि सरकारी खर्च का रोजगार एवं उत्पादन पर सुप्रभाव पड़ना जरूरी नहीं है। जब सरकार नोट छापकर खर्च करती है तब तत्काल बाजार में मांग बढ़ती है जैसे – हाइवे बनााने के लिये सरिया, सीमेंट और श्रम की मांग बढ़ती है।

यदि सरिया, सीमेंट और श्रम के मूल्य पूर्ववत् रहे तो बढ़े हुये सरकारी खर्च का सुप्रभााव अवश्य पड़ेगा। परन्तु यदि व्यापारियों एवं श्रमिकों ने अनुमान लगा लिया कि सरकार की इस नीति के कारण अवश्य ही महंगाई बढ़ेगी और इन माल का दाम बढ़ा दिया तो सरकारी खर्च में वृद्धि निष्प्रभावी हो जाती है।

मान लीजिये वर्तमान में कुल सरकारी खर्च 50 अरब रूपया है और श्रमिक दिहाड़ी 100 रूपये प्रतिदिन है। सरकार ने घोषणा की कि वह पांच अरब के अतिरिक्त नोट छापकर हाइवे बनायेगी जिसमें श्रमिकों की जरूरत होगी। यानि दस फीसदी वित्तीय घाटा बढ़ाकर वह हाइवे बनाएगी। इस परिस्थिति में यदि श्रमिक की दिहाड़ी पूर्ववत् 100 रूपए की रहती है तो निश्चित रूप से श्रम की मांग बढ़ेगी।

50 अरब रूपए के स्थान पर बाजार में 55 अरब रूपए की मांग बनेगी और श्रमिकों के लिये नये रोजगार बनेगे। परन्तु यदि श्रमिकों को आभास हो गया कि सरकार 10 फीसदी वित्तीय घाटा बना रही है जिससे बाजार में शीघ्र ही कपड़े, जूते, आटे आदि के मूल्यों में 10 फीसदी की वृद्धि होगी; तो वे 100 रूपए के स्थान पर 110 रूपए की दिहाड़ी की मांग कर सकते हैं। यदि ऐसा हुआ तो वित्तीय घाटे की पालिसी निष्प्रभावी हो जाएगी। 50 अरब रूपए के खर्च से 100 रूपए की दिहाड़ी पर जितने रोजगार पूर्व में बन रहे थे, उतने ही रोजगार 55 अरब के खर्च से 110 रूपए की दिहाड़ी पर बनेंगे। इसी प्रकार सरिया एवं सीमेंट के दाम भी भी उद्यमियों द्वारा बढ़ाये जा सकते हैं। यानि सरकारी खर्च में वृद्धि निष्प्रभावी हो सकती है यदि लोगों को शीघ्र बढ़ने वाली महंगाई का आभास हो जाये और तदनुसार माल के दाम में वृद्धि हो जाए।

सरकारी खर्च में वृद्धि का सुप्रभाव न पड़ने का एक और कारण है। सरकार जब नोट छापकर खर्च करती है तो महंगााई बढ़ती है। मान लीजिये पहले देश की आय 50 रूपए प्रति वर्ष था, आटे का दाम 10 रूपए था और अर्थव्यवस्था में 5 किलो आटे का उत्पादन हो रहा था। इस स्थिति में सरकार ने नोट छापे, वित्तीय घाटा बढ़ाया और 5 रूपए का अतिरिक्त खर्च किया। अब 50 के स्थान पर 55 रूपए उसी 5 किलो आटे की खरीद का प्रयास करेंगे जो पूर्व में उपलब्ध था। इस प्रकार आटे का मूल्य 10 रूपए से बढ़कर 11 रूपए हो जाएगा। आटे का दाम बढ़ने से गेहूं का उत्पादन बढ़ेगा पर यह आगे की बात है।

मेरे आकलन में वित्त मंत्री मौका चूक गये हैं। जरूरत थी कि सरकारी खर्चों का इस दृष्टि से अध्ययन कराते कि जिन खर्चों से तत्काल उत्पादन पर सुप्रभाव पड़ता है उन्हें बढ़ाना था; और जिनका दीर्घकाल में प्रभाव पड़ता है उन्हें घटाना था।

समस्या यह है कि इसी अनुपात में दूसरी मुद्राओं के सामने रूपए की कीमत में गिरावट आयेगी। एक किलो गेहूं का दाम अंतर्राष्ट्रीय बाजार में पूर्ववत् रहेगा परन्तु भारत में गेहूं का मूल्य बढ़ जाएगा। इससे भारतीय मुद्रा का मूल्य दूसरी मुद्राओं के सामने गिरेगा, देश में आयातित माल का दाम बढ़ जाएगा और वित्तीय घाटे की वृद्धि होने चाला लाभ आंशिक रूप से निरस्त हो जाएगा।

स्पष्ट होता है कि वित्तीय घाटे से लाभ केवल अल्प समय में ही हो सकता है। लम्बे समय में अर्थव्यवस्था की गाड़ी पुनः पूर्व की धीमी गति से चलने लगती है। इस परिप्रेक्ष्य में कीन्स के सुझाव को समझना होगा। कीन्स ने राष्ट्रपति ट्रूमैन को सुझाव दिया था कि वे नोट छापकर मांग बढ़ायें। लगभग उसी समय द्वितीय विश्व युद्ध प्रारम्भ हो गया था। यूरोप से माल एवं अस्त्र की भारी मांग आ रही थी। इस मांग की पूर्ति के लिये अमरीकी अर्थव्यवस्था में तेजी आयी थी।

मेरा मानना है कि अमरीकी अर्थव्यवस्था में युद्ध की जरूरतों की सप्लाई करने से आयी तेजी का श्रेय अनायास ही कीन्स को दे दिया गया था। निष्कर्ष निकलता है कि वित्तीय घाटे के माध्यम से लम्बे समय में आर्थिक विकास हासिल नहीं किया जा सकता है परन्तु यदि कहीं विशेष रूकावट हो तो अल्प समय में उसे वित्तीय घाटे से तोड़ा जा सकता है। अर्थात् वित्त मंत्री को चाहिये कि नोट छापकर ऐसी अतिरिक्त योजनायें लागू करें जिनसे उत्पादन तत्काल होता हो।

मेरे आकलन में वित्त मंत्री मौका चूक गये हैं। जरूरत थी कि सरकारी खर्चों का इस दृष्टि से अध्ययन कराते कि जिन खर्चों से तत्काल उत्पादन पर सुप्रभाव पड़ता है उन्हें बढ़ाना था; और जिनका दीर्घकाल में प्रभाव पड़ता है उन्हें घटाना था। ऐसा करने से वित्तीय घाटा पूर्ववत् बना रहने के बावजूद अर्थव्यवस्था में तेजी आती। परन्तु वित्तमंत्री ने सब तरफ खर्चों को नियंत्रण में रखने का प्रयास किया है। इस कारण खर्च में परिवर्तन से जो लाभ मिल सकता था उससे हम वंचित रह गये हैं। ❑

सुरक्षित रहे किसानों की आय

पश्चिमी देशों और अपने देश के किसानों की जरा तुलना कीजिए। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के मुताबिक, 1997 से 2008 के दस वर्षों के बीच करीब 2.40 लाख किसानों ने बढ़ते कर्ज के अपमान से बचने के लिए खुदकुशी की। अन्य 42 फीसदी किसान जीविका का कोई अन्य विकल्प मिलने की स्थिति में खेती छोड़ना चाहते हैं। दूसरी ओर, अमेरिका में 1995 से 2009 के बीच किसानों को प्रत्यक्ष वित्तीय सहायता देने के साथ 12.50 लाख करोड़ रुपये की सब्सिडी दी गई। यानी, जब हमारे किसान कर्ज के बोझ की चपेट में थे, अमेरिकी किसान घर बैठे मोटी सब्सिडी का चेक पा रहे थे।

■ देविन्दर शर्मा

बीते हफ्ते कर्नाटक सरकार ने कृषि आय आयोग के गठन की घोषणा कर दी। इसके नियम व शर्तों को प्रतिपादित करना अभी बाकी है, लेकिन अगर इसे सही ढंग से अमल में लाया गया, और पंजाब में भी शुरू किया गया, तो यह भयावह संकट की चपेट में फंसी भारतीय कृषि की तस्वीर बदलने वाला होगा। प्रख्यात कृषि वैज्ञानिक डॉ एम एस स्वामिनाथन को इसमें खूबियां दिखती हैं। उन्होंने कर्नाटक सरकार को दिए गए मेरे इस सुझाव का समर्थन किया और मुझे एक पत्र लिखा है, घकिसानों की आय में वास्तविक वृद्धि के जरिये उत्पादन संबंधी कृषि विकास से लेकर समग्र विकास को मापने के लिए राष्ट्रीय कृषक नीति में एक बड़े बदलाव की जरूरत है, जो वक्त की मांग है।

देश के हताश कृषक समुदाय की आय–सुरक्षा के बुनियादी मुद्दे को हल करने के लिए एक निकाय गठित करने की दिशा में अब राष्ट्र धीरे–धीरे जागृत हो रहा है। किसानों को आय मुहैया कराना अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार है और ऐसा करके हम वास्तव में अर्थव्यवस्था को ही बढ़ावा दे रहे हैं।

मेरी राय में आधुनिक खेती दो प्रकार से हो रही है। पहली पश्चिमी देशों में होने वाली उच्च सब्सिडी वाली खेती है और दूसरी, विकासशील देशों में जीविका के लिए की जाने वाली खेती। जीविका के लिए की जाने वाली खेती को राहत प्रदान करने का एक ही उपाय है, उसे प्रत्यक्ष वित्तीय सहायता प्रदान करना, जैसा कि समृद्ध एवं औद्योगिक देशों में होता है।

मेरी राय में आधुनिक खेती दो प्रकार से हो रही है। पहली पश्चिमी देशों में होने वाली उच्च सब्सिडी वाली खेती है और दूसरी, विकासशील देशों में जीविका के लिए की जाने वाली खेती। जीविका के लिए की जाने वाली खेती को राहत प्रदान करने का एक ही उपाय है, उसे प्रत्यक्ष वित्तीय सहायता प्रदान करना, जैसा कि समृद्ध एवं औद्योगिक देशों में होता है।

पश्चिमी देशों और अपने देश के किसानों की जरा तुलना कीजिए। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के मुताबिक, 1997 से 2008 के दस वर्षों के बीच करीब 2.40 लाख किसानों ने बढ़ते कर्ज के अपमान से बचने के लिए खुदकुशी की। अन्य 42 फीसदी किसान जीविका का कोई अन्य विकल्प मिलने की स्थिति में खेती छोड़ना चाहते हैं। दूसरी ओर,

अमेरिका में 1995 से 2009 के बीच किसानों को प्रत्यक्ष वित्तीय सहायता देने के साथ 12.50 लाख करोड़ रुपये की सब्सिडी दी गई। यानी, जब हमारे किसान कर्ज के बोझ की चपेट में थे, अमेरिकी किसान घर बैठे मोटी सब्सिडी का चेक पा रहे थे। असल में यूरोप में किसानों को मिलने वाली आर्थिक सहायता बेहद आकर्षक है। वहां के किसान सब्सिडी के रूप में प्रति हेक्टेयर 4,000 रुपये की नकद सहायता प्राप्त करते हैं। अकेले अनाज के मामले में यदि आप यूरोपीय संघ के 27 देशों की 2.2 लाख हेक्टेयर कृषि भूमि में 4,000 रुपये से गुणा करें, तो 90.40 लाख करोड़ रुपये का चौंकाने वाला आंकड़ा सामने आता है।

ऐसे समय में जब दूसरी हरित क्रांति शुरू करने के लिए हरसंभव प्रयास किए जा रहे हैं, अनुवांशिक रूप से संशोधित फसलों एवं कृषि व्यवसाय में लगी कंपनियों के हाथों बीज का नियंत्रण सौंपने वाले कड़े बौद्धिक संपदा कानूनों को प्रोत्साहित करने और किसानों को आर्थिक रूप से समृद्ध बनाने के उद्देश्य से शुरू की गई अनुबंध खेती, बड़े रिटेल स्टोर, कमोडिटी एक्सचेंज व वायदा कारोबार के लिए बाजार ढांचा तैयार करने जैसे तमाम उपाय वास्तव में उन कंपनियों को ही मोटा मुनाफा देंगे, जबकि किसान खाली जेब रहने को मजबूर होंगे।

यदि यह सब व्यावहारिक और किसानों की आय बढ़ाने वाला था, तो कोई कारण नहीं है कि अमेरिकी एवं यूरोपीय सरकारें अपने छोटे से कृषक समुदाय को भारी सब्सिडी प्रदान करतीं, जिनमें से ज्यादातर हिस्सा नकद वित्तीय सहायता है। पिछले 45 वर्षों से प्रमुख नौकरशाह एवं टेक्नोक्रैट किसानों से कहते आ रहे हैं कि वे जितना अन्न उगाएंगे, उतनी ही उनकी आमदनी बढ़ेगी। ऐसा कहते हुए वे वास्तव में किसानों की मदद नहीं करते, बल्कि उनके नाम पर कीटनाशक, उर्वरक, बीज, एवं यांत्रिक उपकरण बनाने वाली कंपनियों का व्यावसायिक हित साधते हैं। कोई आश्चर्य नहीं कि वर्ष 2003–04 में नेशनल सैंपल सर्वे संगठन ने एक कृषक परिवार की मासिक आमदनी 2,115 रुपये आंकी थी।

छठे वेतन आयोग के तहत सरकारी सेवाओं में कार्यरत एक चपरासी की मासिक आय 15,000 रुपये है। क्या एक राष्ट्र के रूप में हम किसानों को चपरासी के बराबर भी मासिक आमदनी देने के बारे में नहीं सोच सकते? अगर कृषि वास्तव में लाभप्रद थी, तो कोई कारण नहीं है कि इतनी संख्या में किसान आत्महत्या करते। यहां तक कि कृषि में अग्रणी पंजाब में भी प्रतिदिन दो किसान आत्महत्या करते हैं।

छठे वेतन आयोग के तहत सरकारी सेवाओं में कार्यरत एक चपरासी की मासिक आय 15,000 रुपये है। क्या एक राष्ट्र के रूप में हम किसानों को चपरासी के बराबर भी मासिक आमदनी देने के बारे में नहीं सोच सकते? अगर कृषि वास्तव में लाभप्रद थी, तो कोई कारण नहीं है कि इतनी संख्या में किसान आत्महत्या करते। यहां तक कि कृषि में अग्रणी पंजाब में भी प्रतिदिन दो किसान आत्महत्या करते हैं।

किसानों को यह यकीन दिलाया गया था कि वे जितनी लागत लगाएंगे, उन्हें उतना ही फायदा होगा। अब उन्हें बताया जा रहा है कि मुक्त बाजार (कमोडिटी एक्सचेंज, वायदा कारोबार और बड़े रिटेल स्टोर) खेती को लाभप्रद और आर्थिक रूप से समृद्ध बनाएगा। लेकिन जो उन्हें नहीं बताया जा रहा है, वह यह है कि यह अमेरिका और यूरोपीय संघ के देशों में भी कामयाब नहीं हुआ और इसलिए भारत में भी सफल नहीं होगा।

जरा देखिए कि एक गलत धारणा को किस आक्रामकता से देश में बढ़ाया जा रहा है। वायदा कारोबार एवं कमोडिटी एक्सचेंज के लाभार्थी किसान नहीं, बल्कि सट्टेबाज, कंस्लटेंसी कंपनियां एवं रेटिंग एजेंसियां होंगी। लेकिन यह किसानों के नाम पर हो रहा है। दूसरी ओर किसान संघों ने मात्र न्यूनतम समर्थन मूल्य को बढ़ाने की मांग की है। उनमें से किसी ने भी नहीं सोचा कि देश में मुश्किल से 35 से 40 फीसदी किसान ही हैं, जो सरकारी खरीद मूल्य का लाभ उठा सकते हैं, क्योंकि उन्हीं के पास मंडियों में बेचने के लिए अनाज बचता है। कृषक समुदाय के बाकी लोग, जो बहुमत में हैं, वे खाने के लिए भी अन्न उपजाते हैं। अगर वे अपने लिए खाद्यान्न उत्पादन नहीं करेंगे, तो उतना अनाज आयात करना पड़ेगा। इसलिए उन्हें भी पर्याप्त मुआवजा दिया जाना चाहिए।

कृषि आय आयोग को यदि सही ढंग से अमल में लाया गया और पंजाब जैसे कृषि क्षेत्र में अग्रणी राज्यों में भी इसे शुरू किया गया, तो यह हमारी कृषि की तस्वीर बदल देगा। यह बतलाता है कि कृषक समुदाय की आय–सुरक्षा के मुद्दे को सुलझाने की दिशा में राष्ट्र जागृत हो रहा है। ❑

भ्रष्टाचार नहीं लूट...

इटली की कंपनी को ब्रिटेन में बने 12 हेलीकॉप्टरों की आपूर्ति का ऑर्डर मिला था। ये वही ऊंची कीमत वाले हेलीकॉप्टर हैं, जिन्हें अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने बेहद महंगे बताकर अपने इस्तेमाल के लिए खरीदने से इनकार कर दिया था। जो सौदा धनाढ्य अमेरिका को बहुत महंगा लगा था, उस पर गरीब भारत पैसे लुटाने में कोई हिचक नहीं दिखाई।

■ ब्रह्म चेलानी

भारत में भ्रष्टाचार का व्यापक फैलाव देश की राष्ट्रीय सुरक्षा को खतरे में डाल रहा है। रक्षा सौदे भारत में घूसखोरी के सबसे बड़े एकल थेत हैं। ऐसे में रक्षा सौदों में एक और घोटाला उजागर होते देख हैरत नहीं होती। इस घोटाले के भंडाफोड़ का श्रेय इटली के जांचकर्ताओं को जाता है। यह भारी–भरकम रिश्वत का ही कमाल था कि इटली की इस कंपनी को ब्रिटेन में बने 12 हेलीकॉप्टरों की आपूर्ति का ऑर्डर मिला था। ये वही ऊंची कीमत वाले हेलीकॉप्टर हैं, जिन्हें अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने बेहद महंगे बताकर अपने इस्तेमाल के लिए खरीदने से इन्कार कर दिया था।

जो सौदा धनाढय अमेरिका को बहुत महंगा लगा था, उस पर गरीब भारत पैसे लुटाने में कोई हिचक नहीं दिखाई। भारत हथियारों और अन्य रक्षा उपकरणों का विश्व का सबसे बड़ा आयातक बन चुका है। हथियारों के वैश्विक व्यापार में भारत की हिस्सेदारी 10 फीसद पहुंच गई है।

भारत में हथियारों का आयात चीन और पाकिस्तान के सम्मिलित आयात के बराबर पहुंच गया है। इससे किसी को भ्रम हो सकता है कि इतने बड़े पैमाने पर आयात एक सुनियोजित, संगठित सैन्य ढांचे के निर्माण के लिए किया जा रहा है।

असलियत यह है कि हथियारों का आयात बिना किसी सामरिक दिशा के ऊटपटांग तरीके से किया जा रहा है। इसका परिणाम यह है कि इस खरीदारी से भारत की सुरक्षा मजबूत होने के बजाय इसमें दरारें पड़ रही हैं। किसी भी हथियार या सैन्य प्रणाली के आयात से भारत उस आपूर्तिकर्ता देश का तब तक के लिए बंधक बन जाता है जब तक वह रक्षा उपकरण या हथियार प्रणाली इस्तेमाल हो रही है। स्पेयर पार्ट्स और मरम्मत आदि के लिए भारत हथियार की आपूर्ति करने

यह हैरत की बात नहीं है कि भारत ऐसे विदेशी हथियारों का कबाड़खाना बन गया है, जिनके बिना इसका काम आसानी से चल सकता था। नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक (कैग) सरकार पर बार–बार लांछन लगा चुका है कि वह हथियारों के आयात में जवाबदेही से बचती है और इस वजह से भारतीय सुरक्षा में बड़ी–बड़ी दरारें बन गई हैं। हथियारों के आयात पर पूरे विश्व में सबसे अधिक धन खर्च करने के बाद भी हालत यह है कि खुद सरकार ने स्वीकार किया है कि वह पाकिस्तान के खिलाफ भी परंपरागत सैन्य बढ़त को गंवा चुकी है।

वाले देश पर निर्भर हो जाता है। इसके बावजूद बुनियादी रक्षा जरूरतों के लिए भी भारत अन्य देशों पर निर्भर है और इस प्रकार आसानी से बाहरी दबाव में आ सकता है, खासतौर पर युद्ध जैसे आपात स्थिति में। भारत बड़ी बेतरतीबी के साथ, बिना किसी सामरिक लक्ष्य के खुद को हथियारों से सुसज्जित कर रहा है।

रक्षा सौदों में घूस का मोटा माल राजनेताओं, बिचौलियों और नौकरशाहों के खाते में जाता है। बचा हुआ हिस्सा सैन्य अधिकारी झटक लेते हैं। असलियत यह है कि हथियारों का आयात भारत को असुरक्षित और गरीब रखने में योगदान देता है। इस प्रकार रक्षा आयात भारत के भ्रष्टाचारियों के लिए तो अच्छा है, किंतु राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए नहीं।

अगर आज भारत को नरम राष्ट्र के रूप में देखा जाता है तो इसका बड़ा दोष उन लोगों पर जाता है जो राजनीतिक प्रतिष्ठान में शीर्ष पदों पर आसीन हैं। यही नहीं इसके लिए वह विपक्ष भी जिम्मेदार है जो केंद्र में सत्ता में रह चुका है। इस प्रकार की नरमी के कारण भारत उन देशों के निशाने पर आ गया है जो उसकी सुरक्षा को कमजोर रखना चाहते हैं। चाहे ये क्षेत्रीय शत्रु हों या फिर संदिग्ध हथियार प्रणाली बेचने वाले। अब भारत भ्रष्टाचार का नहीं, बल्कि लूट का सामना कर रहा है।

असल में दो दशकों के आर्थिक निजीकरण और उदारीकरण के बाद आज के मुकाबले तब भारत अपने हितों और सीमाओं की रक्षा बेहतर ढंग से कर रहा था जब वह आर्थिक रूप से कमजोर था, जैसे इंदिरा गांधी के कार्यकाल में। इस भारी–भरकम भ्रष्टाचार के युग में भारत की राजनीतिक नियति के जिम्मेदार लोगों का लालच तमाम हदें पार कर चुका है। भारत इस बात का जीता–जागता सुबूत है कि कोई व्यवस्था जितनी भ्रष्ट होती है उसमें सत्ता उतनी ही अधिक भ्रष्टाचार में लिप्त होती है। जब भारत में परिभाषित रक्षा नीति ही नहीं है तब वह रक्षा खरीद की सामरिक रूपरेखा का निर्धारण कैसे कर सकता है?

यह हैरत की बात नहीं है कि भारत ऐसे विदेशी हथियारों का कबाड़खाना बन गया है, जिनके बिना इसका काम आसानी से चल सकता था। नियंत्रक एवं महा लेखापरीक्षक (कैग) सरकार पर बार–बार लांछन लगा चुका है कि वह हथियारों के आयात में जवाबदेही से बचती है और इस वजह से भारतीय सुरक्षा में बड़ी–बड़ी दरारें बन गई हैं। हथियारों के आयात पर पूरे विश्व में सबसे अधिक धन खर्च करने के बाद भी हालत यह है कि खुद सरकार ने स्वीकार किया है कि वह पाकिस्तान के खिलाफ भी परंपरागत सैन्य बढ़त को गंवा चुकी है।

सरकार इस हद तक बेदम हो चुकी है कि पाकिस्तानी टुकड़ी द्वारा भारतीय सैनिकों के सिर कलम कर लिए जाने के बाद वह उन्हें हासिल भी नहीं कर पाती, जबकि कुछ सप्ताह पहले भारतीय सीमा में घुसपैठ करने वाले जिस पाकिस्तानी सैनिक को मार गिराया गया था उसका शव लौटाने में जरा भी देरी नहीं करती। बुनियादी रक्षा जरूरतों के लिए दूसरों पर निर्भर कोई भी देश प्रमुख शक्ति नहीं बन सकता है। माओ के कार्यकाल से ही चीन की रक्षा नीति एक सरल सिद्धांत पर टिकी है–अपने संसाधनों से ही अपनी रक्षा की जा सकती है और एक महाशक्ति बनने का यही पहली परीक्षा है। जब चीन गरीब था, तब भी वह लगातार राष्ट्रीय शक्ति के निर्माण में जुटा था। इसके विपरीत भारत अभी तक राइफल तक आयात कर रहा है, क्योंकि आयात लॉबी देश में हथियार उत्पादन का आधार विकसित होने नहीं देती।

बड़ा सवाल है कि इस भयावह स्थिति को कैसे उलटा जा सकता है? पहला, भारत को नए रक्षा खरीद सौदों को तत्काल प्रभाव से स्थगित कर देना चाहिए। इस स्थगनकाल का भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा, बल्कि इससे हर साल अरबों डॉलर की बचत होगी। इस राशि का निवेश घरेलू हथियार उत्पादन आधार बनाने में किया जा सकता है।

दूसरे, रक्षा संबंधी भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के लिए जांच एजेंसियों को स्वतंत्र शक्तियां देनी होंगी। आज इन एजेंसियों पर नियंत्रण उन लोगों का है जिनकी तरफ संदेह की सुई घूमती है। इसी का नतीजा है कि 1980 के बाद से सीबीआई एक भी मामले में घूस लेने वाले को चिन्हित नहीं कर पाई है और रक्षा घोटाले में किसी भी व्यक्ति के खिलाफ दर्ज मामले में सफलता हासिल नहीं कर पाई है। बोफोर्स मामले में सीबीआई की विफलता एक नजीर बन चुकी है।

भारत की सुरक्षा को सबसे बड़ा खतरा चीन या आतंकवाद से नहीं, संस्थागत भ्रष्टाचार से है। भ्रष्टाचार भारत को खोखला कर रहा है। भारत उन देशों में शीर्ष पर है जिनकी चुराई हुई संपदा स्विस बैंकों में जमा है। रक्षा सौदों में घूसखोरी देश के खिलाफ युद्ध अपराध सरीखी है। जो रक्षा सौदों में रिश्वत लेते हैं वे अफजल गुरु से भी अधिक घृणित हैं। फिर भी रक्षा सौदों में घूसखोरी पर आज तक किसी भी राजनेता को सजा देने की बात तो दूर, दोषी तक नहीं ठहराया जा सका है। ❑

सामयिकी

हेलिकॉप्टर सौदे पर सवालों का घेरा

वर्तमान सरकार के दौरान लाखों करोड़ रुपए के घोटाले हो चुके हैं। यह राशि इतनी बड़ी है कि इसे यदि सरकार हस्तगत कर ले तो उसे अगले चार–पांच साल तक किसी भी नागरिक से कोई टैक्स लेने की भी जरूरत नहीं पड़े। यदि यह राशि बांट दी जाए तो भारत का हर नागरिक लखपति बन जाए। भारत के हर नागरिक को शिक्षित और स्वस्थ रखा जा सकता है, इस राशि में! जो सरकार भ्रष्टाचार पर आंखें मूंदे रखती है, वह भारत की गरीब जनता से दुश्मनी करती है।

■ वेद प्रताप वैदिक

इटली के दलालों की भारत पर कृपा बनी हुई है। अब से लगभग 25 साल पहले ओत्तावियो क्वात्रोचि ने ऐसी टंगड़ी मारी थी कि कांग्रेस पार्टी कई साल तक सत्ता के गलियारे से बाहर बैठी रही। बोफोर्स के उस सौदे में सिर्फ 64 करोड़ की रिश्वत थी, लेकिन हेलिकॉप्टरों के इस सौदे में सिर्फ रिश्वत ही रिश्वत साढ़े तीन सौ करोड़ रुपए की है। पता नहीं, इतनी बड़ी रिश्वत डकारने वाले लोग अब कितने वर्षों तक सत्ता से बाहर रहेंगे? इस दुर्भाग्य का श्रेय भी इटली की कंपनी फिनमेक्कानिका के सरगना गिसेप ओर्सी को मिलेगा।

वैसे अभी डरने की कोई बात नहीं है। रक्षा मंत्री एके एंटनी ने सीबीआई की जांच बिठा दी है। जैसे बोफोर्स कांड में यह सर्वमान्य तथ्य था कि 64 करोड़ रुपए की रिश्वत खाई गई है, वैसे ही हेलिकॉप्टरों के लिए साढ़े तीन अरब की रिश्वत के तथ्य को भी सभी स्वीकार कर लेंगे। दोनों रिश्वतों में देने वालों का नाम भी पता चल गया है, लेकिन लेने वाला कौन है, इसका पता न तो बोफोर्स में चला था और न ही इन हेलिकॉप्टरों में चलेगा। पहले हमारी सरकार की साख को तोपों ने उड़ा दिया था, अब उसे हेलिकॉप्टर उड़ा ले जाएंगे।

अच्छा है कि इटली की सरकार ने अगस्तावेस्टलैंड कंपनी के जिन अधिकारियों को गिरफ्तार किया है, उन्होंने हमारे नेताओं में से किसी का भी नाम नहीं लिया है। लेकिन तत्कालीन वायुसेना प्रमुख एसपी त्यागी और उनके तीन रिश्तेदारों के नाम साफ–साफ बताए हैं। उन्होंने एयर मार्शल त्यागी से अपनी मुलाकातों का भी ब्यौरा दिया है।

त्यागी ने उन विदेशी दलालों से मिलने की भी पुष्टि की है, लेकिन उन्होंने अपने बचाव में दो मुख्य तर्क दिए हैं। एक तो इस 3700 करोड़ रुपए के समझौते पर दस्तखत उनकी सेवानिवृत्ति के बाद हुए हैं और दूसरा इन हेलिकॉप्टरों की खरीद के लिए शर्तों को 2003 में ढीला किया गया था। उस समय एनडीए सरकार थी। उनका यह कहना तो हास्यास्पद है कि उनके चचेरे भाई क्या कामकाज करते हैं, यह उन्हें पता नहीं है। जिन दलाल भाइयों

बोफोर्स कांड में यह सर्वमान्य तथ्य था कि 64 करोड़ रुपए की रिश्वत खाई गई है, वैसे ही हेलिकॉप्टरों के लिए साढ़े तीन अरब की रिश्वत के तथ्य को भी सभी स्वीकार कर लेंगे। दोनों रिश्वतों में देने वालों का नाम भी पता चल गया है, लेकिन लेने वाला कौन है, इसका पता न तो बोफोर्स में चला था और न ही इन हेलिकॉप्टरों में चलेगा। पहले हमारी सरकार की साख को तोपों ने उड़ा दिया था, अब उसे हेलिकॉप्टर उड़ा ले जाएंगे।

के दफ्तर में वे अपनी वर्दी पहनकर जाते रहे और जिनके यहां उन विदेशी दलालों से मिलते रहे, उनके बारे में बेखबर रहने की बात पर कौन विश्वास करेगा? यहां मुख्य प्रश्न यह नहीं है कि समझौते पर दस्तखत कब हुए और हेलिकॉप्टर कब भारत आए, असली प्रश्न यह है कि रिश्वत खाई गई या नहीं? और खाई तो किसने खाई?

त्यागी के वायुसेना प्रमुख रहते हुए इस सौदे की वार्ता चली या नहीं? सौदेबाजी हुई या नहीं? अब त्यागी को आत्मरक्षा में जमीन–आसमान एक करना होगा। यह पहली बार है कि किसी सेनाध्यक्ष का नाम सीधा–सीधा उछल रहा है। यह संदेह इसलिए भी पुष्ट होता है कि पूर्व थल–सेनाध्यक्ष वीके सिंह ने दो–टूक शब्दों में कहा था कि ट्रेटा ट्रक की खरीद में उन्हें रिश्वत का लालच दिया गया था।

यदि सचमुच एसपी त्यागी बिल्कुल पाक–साफ हैं तो यह और भी बड़ी मुसीबत बन सकती है। यदि ऐसा है तो साढ़े तीन अरब रुपया गया कहां? यदि रक्षामंत्री एके एंटनी की जांच गहरे में चली गई और त्यागी ने सभी नाम उजागर कर दिए तो वह गडगड़ाहट बोफोर्स की तोपों से भी सौगुनी ज्यादा कानफोड़ू हो जाएगी। तब पता नहीं, किसकी बलि चढ़ेगी?

तब प्रश्न यह भी उठेगा कि जिन्होंने 3700 करोड़ रुपए की खरीद पर मुहर लगाई, उनकी जिम्मेदारी कितनी है? उन्होंने खुद रिश्वत नहीं खाई, लेकिन रिश्वत खाने दी, क्या यह कम बड़ा अपराध है? किसी भी लोकतंत्र में रिश्वत खाने से बड़ा अपराध रिश्वत खाने देना माना जाना चाहिए। सरकार का काम जनता के पैसे की चौकीदारी करना है। यदि चौकीदार की आंखों के सामने लूट मची है और वह उस पर मुहर लगा रहा है तो आप उसे क्या कहेंगे?

प्रश्न यह भी उठेगा कि जिन्होंने 3700 करोड़ रुपए की खरीद पर मुहर लगाई, उनकी जिम्मेदारी कितनी है? उन्होंने खुद रिश्वत नहीं खाई, लेकिन रिश्वत खाने दी, क्या यह कम बड़ा अपराध है? किसी भी लोकतंत्र में रिश्वत खाने से बड़ा अपराध रिश्वत खाने देना माना जाना चाहिए। सरकार का काम जनता के पैसे की चौकीदारी करना है। यदि चौकीदार की आंखों के सामने लूट मची है और वह उस पर मुहर लगा रहा है तो आप उसे क्या कहेंगे?

360 करोड़ यानी साढ़े तीन अरब रुपए की रिश्वत इटेलियन कंपनी ने दी। क्या यह पैसा उसने अपनी जेब से दिया? नहीं, रिश्वत का यह पैसा हेलिकॉप्टरों की कुल कीमत में जोड़ दिया गया, जिसका भुगतान भारत सरकार को करना है। यानी गरीब जनता का पैसा हमारे नेताओं और अफसरों ने लूट खाया।

कितनी विडंबना है कि रिश्वत देने वाले इटली में गिरफ्तार कर लिए गए हैं, जबकि लेने वालों का अभी पता ही नहीं है। इस कांड का भंडाफोड़ इटली में साल भर पहले ही हो चुका है, लेकिन हमारी सरकार अपनी कुंभकर्णी मुद्रा में लेटी रही। शायद वह जनता से यह बात छुपाना चाहती हो कि उसने अरबों–खरबों रुपए के ये हेलिकॉप्टर सिर्फ बड़े नेताओं की यात्रा के लिए खरीदे हैं।

लगभग इसी तरह के खर्चीले हेलिकॉप्टरों को खरीदने से ओबामा ने मना कर दिया था। भारतीय नेताओं ने अपने इस खर्चे पर रिश्वत भी चलने दी, क्या यह हद दर्ज की मक्कारी नहीं है? ऐसी मक्कारी करते हुए पकड़े जाने पर कोई भी इज्जतदार नेता अपने पद पर रहना पसंद नहीं करेगा और जनता अगर जागरूक है तो वह उन्हें कान पकड़कर चलता करेगी।

हमारी सरकार और मंत्री गण यह कहकर अपनी खाल नहीं बचा सकते कि उन्हें रिश्वत का पता चल जाता तो वे यह सौदा रद्द कर देते, जैसी कि वे अब घोषणा कर रहे हैं।

क्या ऐसी बातों का पता रखना उनका धर्म नहीं है? उन्हें सीबीआई, गुप्तचर ब्यूरो, सैन्य गुप्तचरी, टेलीफोन टेपिंग आदि की अगणित सुविधाएं क्यों दे रखी हैं?

इन सुविधाओं का इस्तेमाल अपने राजनीतिक विरोधियों के विरुद्ध वे जितनी फुर्ती से करते हैं, यदि उतनी ही दक्षता से वे सब बड़े सरकारी सौदों पर ध्यान रखें तो इतने भयंकर घोटाले हो ही क्यों?

वर्तमान सरकार के दौरान लाखों करोड़ रुपए के घोटाले हो चुके हैं। यह राशि इतनी बड़ी है कि इसे यदि सरकार हस्तगत कर ले तो उसे अगले चार–पांच साल तक किसी भी नागरिक से कोई टैक्स लेने की भी जरूरत नहीं पड़े। यदि यह राशि बांट दी जाए तो भारत का हर नागरिक लखपति बन जाए। भारत के हर नागरिक को शिक्षित और स्वस्थ रखा जा सकता है, इस राशि में! जो सरकार भ्रष्टाचार पर आंखें मूंदे रखती है, वह भारत की गरीब जनता से दुश्मनी करती है। ❑

सुरक्षा पर गहराते सवाल

हैदराबाद पर पिछले दस सालों के दौरान तीसरी बार आतंकी हमला हुआ है। हर आतंकी हमले, खासकर देश की आर्थिक राजधानी मुंबई पर हुए आतंकी हमले के बाद सरकार बार–बार सुरक्षा व्यवस्था को चाक–चौबंद करने का दावा करती आई है। हैदराबाद पर हुए इस आतंकी हमले ने नाकारा सरकार की लचर नीतियों को नंगा कर दिया है।

■ बलवीर पुंज

खुफिया जानकारी होने के बावजूद हैदराबाद में आतंकी भारत के सभ्य समाज को लहूलुहान करने में सफल रहे। अजमल कसाब और खासकर अफजल गुरु को फांसी दिए जाने के बाद से ही जिहादी हमलों की आशंका जताई जा रही थी और केंद्रीय गृहमंत्री सुशील कुमार शिंदे की मानें तो पुणे बम धमाके के आरोप में दिल्ली के तिहाड़ जेल में बंद इंडियन मुजाहिदीन के आतंकी मकबूल से पूछताछ में पता चला था कि उसने व उसके एक साथी ने हैदराबाद के दिलसुखनगर की टोह ली थी।

क्यों नहीं जांच एजेंसियों ने मकबूल से संभावित विस्फोट स्थल की जानकारी ली? हैदराबाद पर पिछले दस सालों के दौरान तीसरी बार आतंकी हमला हुआ है। हर आतंकी हमले, खासकर देश की आर्थिक राजधानी मुंबई पर हुए आतंकी हमले के बाद सरकार बार–बार सुरक्षा व्यवस्था को चाक–चौबंद करने का दावा करती आई है। हैदराबाद पर हुए इस आतंकी हमले ने नाकारा सरकार की लचर नीतियों को नंगा कर दिया है।

2002 में हैदराबाद के साईं मंदिर में आतंकी हमला हुआ। इसके बाद 2007 में मक्का मस्जिद और लुंबिनी पार्क व गोकुल चाट पर आतंकियों ने कहर बरपाया। आतंकी हमलों का एक मकसद सांप्रदायिक सौहार्द को भंग करना भी होता है और इसीलिए हैदराबाद को बार–बार निशाना बनाया जा रहा है। ऐसे में स्वाभाविक सवाल है कि जब सरकार के पास आतंकी हमले की पूर्व सूचना थी तो हैदराबाद जैसी अतिसंवदेनशील जगह को लेकर खास चौकसी क्यों नहीं बरती गई?

हैदराबाद में हुआ आतंकी हमला जिहादियों के बढ़े मनोबल की ही पुष्टि करता है। विडंबना यह है कि जिहादियों का मानवर्द्धन सेक्युलरिस्टों की दोहरी मानसिकता के कारण ही संभव हो पा रहा है।

अभी हाल ही में जयपुर में आयोजित कांग्रेस के चिंतन शिविर में गृहमंत्री शिंदे ने भारतीय जनता पार्टी और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर आतंकी प्रशिक्षण शिविर चलाने का आरोप लगाया था। शिंदे के इस गैर जिम्मेदार बयान से सबसे अधिक नुकसान भारत को हुआ। पाकिस्तान हमेशा यह दावा करता रहा है कि उसके यहां होने वाली आतंकी गतिविधियों को न तो सरकार और न ही सेना का समर्थन प्राप्त है। उसका कुतर्क यह भी है कि वह भी दूसरे देशों की तरह आतंकवाद से पीड़ित है।

भारत अब तक कहता आया है कि उसके यहां आतंकवाद सीमा पार से निर्यात होता है, शिंदे के बयान के बाद दुनिया की नजरों में भारत की जहां हास्यास्पद स्थिति हो गई है वहीं पाकिस्तान के हाथ मजबूत हुए हैं। अब पाकिस्तान भारत के गृहमंत्री के बयान को अंतर्राष्ट्रीय मंचों से उठाकर यह साबित करना चाहेगा कि आतंकवाद को प्रोत्साहन देने के लिए यदि कोई कसूरवार है तो वह भारत है।

भारत अब तक कहता आया है कि उसके यहां आतंकवाद सीमा पार से निर्यात होता है, शिंदे के बयान के बाद दुनिया की नजरों में भारत की जहां हास्यास्पद स्थिति हो गई है वहीं पाकिस्तान के हाथ मजबूत हुए हैं। अब पाकिस्तान भारत के गृहमंत्री के बयान को अंतर्राष्ट्रीय मंचों से उठाकर यह साबित करना चाहेगा कि आतंकवाद को प्रोत्साहन देने के लिए यदि कोई कसूरवार है तो वह भारत है। शिंदे अब भले ही अपने बयान से मुकर गए हैं, किंतु इस बात में दो राय नहीं कि उनका बयान इस्लामी आतंक के सच और उसकी बर्बरता को छिपाने के लिए कथित हिंदू आतंक का हौवा खड़ा करने की साजिश का ही अंग है।

शिंदे अब भले ही अपने बयान से मुकर गए हैं, किंतु इस बात में दो राय नहीं कि उनका बयान इस्लामी आतंक के सच और उसकी बर्बरता को छिपाने के लिए कथित हिंदू आतंक का हौवा खड़ा करने की साजिश का ही अंग है।

आतंकी हमलों को केवल सुरक्षा बलों और खुफिया एजेंसियों की नाकामी के रूप में नहीं देखना चाहिए। इस देश में सेक्युलरिस्टों के प्रताप से सुरक्षा बलों का मनोबल तोड़ने का कुप्रयास किया जा रहा है और यह सब वोट बैंक की घिनौनी राजनीति के नाम पर पोषित किया जा रहा है।

दिल्ली के बाटला हाउस मुठभेड़ में इंस्पेक्टर एमसी शर्मा को अपनी जान गंवानी पड़ी थी, किंतु उनकी शहादत को अपमानित करते हुए सेक्युलरिस्ट आज तक उस मुठभेड़ को फर्जी साबित करने पर तुले हैं। कांग्रेस के महासचिव दिग्विजय सिंह उस मुहिम के पुरोधा हैं।

उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव के दौरान भी उन्होंने आजमगढ़ में इस मुद्दे को उठाया था। अफजल को फांसी दिए जाने पर जहां पाकिस्तान के आतंकी सरगना खासे खफा हैं वहीं देश के अंदर भी स्वयंभू मानवाधिकारियों और बुद्धिजीवियों की ऐसी टोली है जो भारतीय न्याय व्यवस्था पर सवाल खड़े कर रही है।

कश्मीर के एक अलगाववादी नेता यासीन मलिक अफजल को फांसी दिए जाने के विरोध में पाकिस्तान की धरती पर न केवल भूख हड़ताल पर बैठते हैं, बल्कि मुंबई को रक्तरंजित करने के अपराधी हाफिज सईद के साथ मंच भी साझा करते हैं, किंतु सेक्युलर सत्ता अधिष्ठान यासीन मलिक को दंडित करने की आवश्यकता नहीं समझता।

अमेरिका ने आतंकी हमले के बाद कड़े नियम कानून बनाए, जिसके कारण वहां दोबारा कोई आतंकी घटना नहीं हुई, किंतु यहां न केवल पोटा जैसे कड़े कानून को निरस्त किया गया, बल्कि कुछ राज्यों द्वारा इस दिशा में किए जा रहे गंभीर प्रयासों का मार्ग अवरुद्ध रखा जा रहा है। सेक्युलर दल जिहाद का सच स्वीकारना नहीं चाहते।

भारत को हजार टुकड़ों में खंडित करने का पाकिस्तानी एजेंडा भारत और भारत की बहुलतावादी सनातन संस्कृति के खिलाफ मजहबी जुनून से प्रेरित है, किंतु सेक्युलर दल इसे मुट्ठी भर गुमराह व अशिक्षित मुस्लिम युवाओं की करतूत बताते आए हैं।

दुनिया भर में जहां कहीं भी आतंकी हमले हुए हैं उसे अंजाम देने वाले उच्च शिक्षित हैं। अफजल को फांसी दिए जाने के ठीक चार दिन बाद हाफिज सईद ने ट्वीटर पर लिखा था कि भारत ने ऐसी गलती की है, जिसे सुधारा नहीं जा सकता। कश्मीरियों को अपनी आजादी और आत्मनिर्णय के हक के लिए लड़ने का अधिकार है।

2007 में हैदराबाद में हुए आतंकी हमले से पूर्व उसने घोषणा की थी कि उसने भारत के मुस्लिम बहुल इलाकों पर कब्जा करने की मुहिम छेड़ दी है। इससे पहले 2000 में उसने कहा था कि कश्मीर भारत पर कब्जा करने का प्रवेश द्वार बनेगा और हैदराबाद व जूनागढ़ उसकी सबसे बड़ी प्राथमिकताएं हैं। यहां याद रखना चाहिए कि हैदराबाद के निजाम ने अपनी रियासत के भारत में विलय से इन्कार किया था, वहीं जूनागढ़ के हिंदू बहुल होने के बावजूद वहां का मुस्लिम शासक पाकिस्तान के साथ जाना चाहता था। हैदराबाद की निजामत को बचाने के लिए तब मजलिस–ए–इत्तेहादुल मुसलमीन की स्थापना हुई थी। आज उसी संगठन के निर्वाचित विधायक अकबरुद्दीन ओवैसी भड़काऊ भाषण देते हैं और हजारों की भीड़ मजहबी जूनून में नारे लगाती है।

हैदराबाद का दिलसुखनगर हिंदू बहुल इलाका है और निरंतर दंगों से दो–चार होता रहा है। इस इलाके के मंदिर 1999 से जिहादियों के निशाने पर हैं, किंतु सेक्युलर सत्ता अधिष्ठान आंख मूंदे रहता है। इस्लामी जिहाद को कुतर्कों से दबाने और उसकी तुलना में कथित हिंदू आतंक का हौवा खड़ा करने की मुहिम बंद नहीं हुई तो सभ्य समाज आगे भी इसी तरह क्षतविक्षत होने को अभिशप्त रहेगा। ❑

पर्यावरण

घातक होता वायु प्रदूषण

देश की साठ प्रतिशत से अधिक की बहुसंख्यक युवा पीढ़ी आज तनावग्रस्त है। अब यदि हमारे शिशु भी वायु प्रदूषण के कारण कमजोर पैदा होंगे तो भारत के भविष्य का मानव संसाधन कैसा होगा, इसकी कल्पना आसानी से की जा सकती है। विश्व मंच पर खेलों में हमारा स्तर हम जानते हैं। अब कमजोर नस्ल के चलते यदि हम दिमागी रूप से कमजोर एवं शारीरिक रूप से अस्वस्थ होते जाएंगे तो कैसे हमारे विश्व की महाशक्ति बनने का स्वप्न यथार्थ रूप ले पाएगा. . .

■ पंकज चतुर्वेदी

वर्तमान समय में पर्यावरण प्रदूषण के दुष्प्रभावों की चर्चा आम है। यह बात और है कि हम इस विषय पर चर्चा अधिक और काम कम कर रहे हैं। भौतिकतावाद के इस दौर में आम व्यक्ति अपने शारीरिक सुखों के लिए इतना आत्मकेंद्रित हो चुका है कि वह अपने आसपास के बिगड़ते वातावरण को लेकर सुप्तावस्था में है। बस अपना काम बन जाए और हमें आराम मिल जाए वर्तमान में हर कोई इसी प्रवृत्ति के साथ अपना जीवन जी रहा है।

हमारे आसपास वायु, जल, जंगल और जमीन जो भी दृश्य या अदृश्य है, लगभग सब कुछ अब प्रदूषण की कड़ी गिरफ्त में है। अभी तक प्रदूषण के दुष्प्रभाव तो हम देखते–भुगतते आ ही रहे थे, लेकिन एक ताजा वैज्ञानिक शोध ने मानव जाति की चिंता और बढ़ा दी है। इस शोध के अनुसार अब वायु प्रदूषण वाले क्षेत्रों में पैदा होने वाले नवजात शिशुओं का वजन कम होता जा रहा है।

एनवायरनमेंटल हेल्थ प्रॉस्पेक्टिव नाम की संस्था ने विभिन्न देशों में लाखों की संख्या में नवजात शिशुओं पर अध्ययन एवं जांच के बाद यह निष्कर्ष निकाला है कि ये स्थितियाँ साफ संकेत कर रही हैं कि भविष्य में इस विषय में लापरवाही

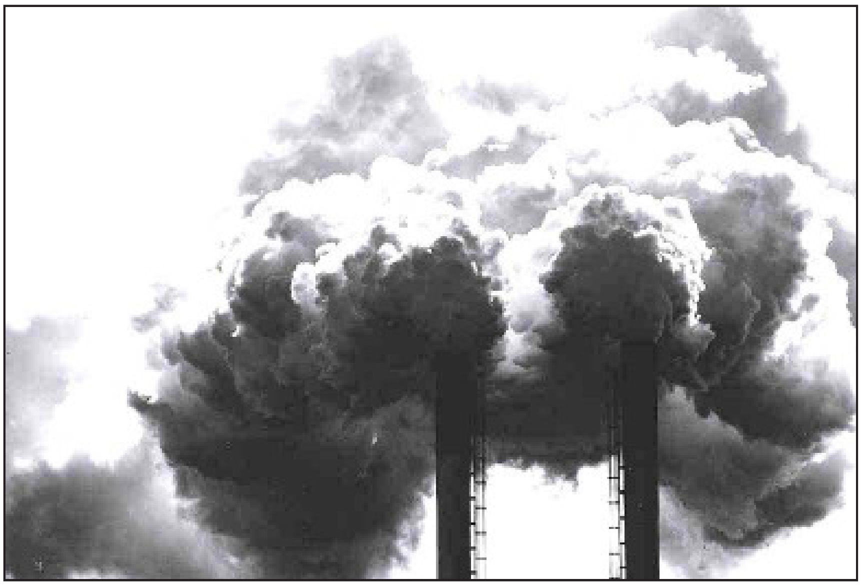

बरतने के परिणाम और भी भयावाह हो सकते हैं। हालांकि इस शोध का केंद्र भारत नहीं है, फिर भी भारत जैसे देश में जहां तमाम सरकारी प्रयासों के बाद भी कुपोषण और शिशु मृत्यु दर में आशातीत सफलता नहीं मिल सकी है, वहां इस प्रकार के वैश्विक संकेत और भी बड़ी चिंता के कारण हैं।

सामान्य से कम वजन के नवजात को वैसे भी आयु बढ़ाने के साथ स्वास्थ्य संबंधी अनेक विकारों का सामना करना पड़ता है। ऐसे बच्चों के शरीर में कम प्रतिरोधी क्षमता और श्वसन संबंधी रोग सामान्य बात है। कई बार तो इसका परिणाम मृत्यु के रूप में भी सामने आता है। यह बात और है कि इस शोध के परिणाम में शिशु मृत्यु की आशंका तो व्यक्त नहीं की गई है, किंतु वायु प्रदूषित वातवरण में उत्पन्न हुए शिशु को मधुमेह, रक्तचाप और दिल की बीमारियां होने का डर साफ तौर पर जताया गया है।

विकास की अंधी दौड़ में शामिल होकर हम धीरे–धीरे इस बात से मुंह चुराने लगे हैं कि प्राकृतिक संसाधन हमारे सदुपयोग के लिए हैं न कि शोषण के लिए। यह सच अब स्वीकार किया जाना चाहिए कि हम सब मिलकर प्रकृति एवं उसके संसधानों का अप्राकृतिक रूप से विशुद्ध शोषण ही कर रहे हैं।

सुख–सुविधा के उपकरण, यातायात के समस्त निजी एवं सार्वजानिक परिवहन के साधन, देश के औद्योगिक विकास के वाहक कल–कारखाने एवं बड़े उद्योग–धंधे सभी का सह–उत्पाद वायु प्रदूषण है। विज्ञान में उत्पाद के साथ सह–उत्पाद का भी पूरा ध्यान रखना अपेक्षित है, लेकिन हमारे देश में लगता है कि इसका अभाव दिनों–दिन बढ़ता जा रहा है, जिसके कारण वायु प्रदूषण के दुष्प्रभाव बहुत तीव्र गति से बढ़ रहे हैं।

भारत में जननी सुरक्षा एवं प्रसव को लेकर पहले ही बहुत काम करने की जरूरत है। आज भी हम जननी एवं गर्भस्थ शिशु सुरक्षा के विषय में उतने सजग एवं सतर्क नहीं हैं, जितना इस उन्नत विज्ञान के युग में होना चाहिए। यह भी सत्य है कि स्थितियां पहले से बेहतर हुई हैं, लेकिन मानव जाति की नादानियों से चुनौतियां भी उसी अनुपात में बढ़ी हैं।

वायु प्रदूषण के सिलसिले में हुए इस शोध ने भी ऐसी ही एक चुनौती की ओर आगाह किया है। विकास की अंधी दौड़ में शामिल होकर हम धीरे–धीरे इस बात से मुंह चुराने लगे हैं कि प्राकृतिक संसाधन हमारे सदुपयोग के लिए हैं न कि शोषण के लिए। यह सच अब स्वीकार किया जाना चाहिए कि हम सब मिलकर प्रकृति एवं उसके संसधानों का अप्राकृतिक रूप से विशुद्ध शोषण ही कर रहे हैं। फिर चाहे वह नदियों को रोकना हो, खनिज, वन संपदा कुछ भी क्यों न हो।

हालात ये हैं कि जनसंख्या बढ़ने के साथ–साथ तमाम नैसर्गिक स्रोतों के उपयोगकर्ताओं की संख्या भी देश में बढ़ी है, किंतु दुर्भाग्यवश हमने इन स्रोतों के रख–रखाव पर ध्यान नहीं दिया और पूरा फोकस स्वार्थपूर्ति में लगाए रखा। इसका परिणाम यह निकला कि आज देश में अधिकांश महानगरों एवं नगरों की आबोहवा दूषित–प्रदूषित हो चुकी है।

सुख–सुविधा के उपकरण, यातायात के समस्त निजी एवं सार्वजानिक परिवहन के साधन, देश के औद्योगिक विकास के वाहक कल–कारखाने एवं बड़े उद्योग–धंधे सभी का सह–उत्पाद वायु प्रदूषण है। विज्ञान में उत्पाद के साथ सह–उत्पाद का भी पूरा ध्यान रखना अपेक्षित है, लेकिन हमारे देश में लगता है कि इसका अभाव दिनों–दिन बढ़ता जा रहा है, जिसके कारण वायु प्रदूषण के दुष्प्रभाव बहुत तीव्र गति से बढ़ रहे हैं।

हमारे पड़ोसी चीन ने अपने बीजिंग शहर को वायु प्रदूषण से मुक्त करने के लिए बीस वर्षीय योजना पर अमल भी शुरू कर दिया है, लेकिन भारत में लगता है कि सभी अभी गहरी निद्रा में हैं। उसने तुरंत प्रभाव से 300 से ज्यादा फैक्टरियां बंद कर दी हैं। यह भी सत्य है कि आज के आधुनिक युग में दुनिया की गति से कदमताल करने के लिए संचार, परिवहन और कल–कारखाने सभी अति आवश्यक हैं, किंतु इसके साथ–साथ सेहतमंद एवं निरोगी शरीर के लिए अपने इर्द–गिर्द की वायु और संपूर्ण पर्यावरण का स्वस्थ एवं सशक्त रहना भी उतना ही जरूरी है।

तमाम वैज्ञानिक चेतावनियों के बाद भी चिंता का विषय यह है कि इस दिशा में हमारी रफ्तार बहुत धीमी है। देश में आज भी आम आदमी का स्वास्थ्य बहुत अच्छी स्थिति में नहीं है। बदलती जीवनशैली के कारण दिनचर्या लगातार प्रभावित हो रही है। इसी के कारण देश का युवा भी आज मोटापा, मधुमेह, रक्तचाप एवं दिल संबंधी बीमारियों की जकड़न में है।

हालात ये हैं कि जनसंख्या बढ़ने के साथ–साथ तमाम नैसर्गिक स्रोतों के उपयोगकर्ताओं की संख्या भी देश में बढ़ी है, किंतु दुर्भाग्यवश हमने इन स्रोतों के रख–रखाव पर ध्यान नहीं दिया और पूरा फोकस स्वार्थपूर्ति में लगाए रखा। इसका परिणाम यह निकला कि आज देश में अधिकांश महानगरों एवं नगरों की आबोहवा दूषित–प्रदूषित हो चुकी है।

देश की साठ प्रतिशत से अधिक की बहुसंख्यक युवा पीढ़ी आज तनावग्रस्त है। अब यदि हमारे शिशु भी वायु प्रदूषण के कारण कमजोर पैदा होंगे तो भारत के भविष्य का मानव संसाधन कैसा होगा, इसकी कल्पना आसानी से की जा सकती है। विश्व मंच पर खेलों में हमारा स्तर हम जानते हैं।

अब कमजोर नस्ल के चलते यदि हम दिमागी रूप से कमजोर एवं शारीरिक रूप से अस्वस्थ होते जाएंगे तो कैसे हमारे विश्व की महाशक्ति बनने का स्वप्न यथार्थ रूप ले पाएगा। वायु प्रदूषण एवं पर्यावरणीय मामलों में पर्याप्त विलंब के बाद भी स्थितियां नियंत्रित की जा सकती हैं। बस आवश्कता है कि आज से और अभी से हम सब इस वायु प्रदूषण को नियंत्रित करने का जिम्मा निजी मानना शुरू कर दें, क्योंकि अभी तक की दुर्दशा इसलिए भी है कि हम सब इसके लिए सिर्फ सरकार का ही मुंह ताकते आ रहे हैं। ❑

मुद्दा

दूर है सबके लिए स्वास्थ्य का लक्ष्य

12वीं योजना में सरकार से स्वास्थ्य के लिए बजट बढ़ाने की जो उम्मीद थी, उससे कहीं कम बजट बढ़ाया गया है। यह बजट सबके लिए स्वास्थ्य के लक्ष्य तक पहुंचने के लिए पर्याप्त नहीं है। तिस पर जिस तरह सरकार निजी क्षेत्र को स्वास्थ्य के क्षेत्र में प्राथमिकता दे रही है, भारी मुनाफाखोरी की प्रवृत्ति पर नियंत्रण नहीं लगा पा रही है, उससे तो यह आशंका होती है कि जितना बजट बढ़ा है उसका लाभ भी जरूरतमंदों तक नहीं पहुंच पाएगा।

■ **भारत डोगरा**

एक समय उम्मीद थी कि 12वीं पंचवर्षीय योजना में स्वास्थ्य के क्षेत्र में महत्वपूर्ण पहल होगी और सभी लोगों तक स्वास्थ्य सेवाएं पहुंचाने की दिशा में ऐसे कदम उठाए जाएंगे जिनका बहुत समय से इंतजार था। पर अब सरकार इस उद्देश्य से पीछे हटती नजर आ रही है।

यही समय है कि जन–जागृति से सबके लिए स्वास्थ्य या 'हेल्थ फॉर ऑल' की मांग को बुलंद किया जाए तथा सरकार पर इस लक्ष्य को प्राप्त करने का दबाव बनाया जाए। सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त आंकड़े व अध्ययन स्वीकार करते हैं कि देश में करोड़ों लोग इस कारण गरीबी में धकेले जा रहे हैं क्योंकि उन्हें इलाज के लिए असहनीय खर्च सहना पड़ा।

भारत की गिनती दुनिया के उन देशों में होती है जहां असहनीय हद तक लोगों को अपने निजी स्तर पर स्वास्थ्य संबंधी खर्च करने की मजबूरी है। विश्व के अधिकांश देशों में यह जिम्मेदारी सरकार या सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा संभाले जाने की प्रवृत्ति स्पष्ट नजर आती है। यहां तक कि अमेरिका जैसे निजीकरण के गढ़ में भी ओबामा की सरकार ने हाल में स्वास्थ्य के क्षेत्र में सरकार की जिम्मेदारी बढ़ाने की राह अपनाई है।

यदि धनी देशों की यह स्थिति है तो भारत में, जहां अधिकांश लोग बुनियादी सुविधाएं जुटाने में असमर्थ हैं, सरकार की जिम्मेदारी कहीं अधिक है कि वह सभी नागरिकों को स्वास्थ्य सेवाएं व दवाएं उपलब्ध करवाए। यह जिम्मेदारी इन स्थितियों में और बढ़ जाती हैं जब निजी क्षेत्र में दवा उद्योग से लेकर अस्पतालों व नर्सिंग होम तक मुनाफे की प्रवृत्ति हावी है व चिकित्सा क्षेत्र में नैतिक मूल्यों का बड़े पैमाने पर उल्लंघन हो रहा है। सरकार के पक्ष में इतना तो कहना होगा कि कुछ अच्छे कदम भी उठाए गए हैं। सस्ती या निशुल्क जेनेरिक दवाएं उपलब्ध करवाने की दिशा में पहले तमिलनाडु ने अच्छी पहल की थी, अब राजस्थान में भी सरकारी अस्पतालों में निशुल्क दवा उपलब्धता से लोगों को राहत मिली है।

भारत की गिनती दुनिया के उन देशों में होती है जहां असहनीय हद तक लोगों को अपने निजी स्तर पर स्वास्थ्य संबंधी खर्च करने की मजबूरी है। विश्व के अधिकांश देशों में यह जिम्मेदारी सरकार या सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा संभाले जाने की प्रवृत्ति स्पष्ट नजर आती है। यहां तक कि अमेरिका जैसे निजीकरण के गढ़ में भी ओबामा की सरकार ने हाल में स्वास्थ्य के क्षेत्र में सरकार की जिम्मेदारी बढ़ाने की राह अपनाई है।

केंद्रीय सरकार ने वर्ष 2005 में राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन आरंभ किया था तो उससे भी ग्रामीण स्वास्थ्य के क्षेत्र में कुछ उम्मीद जगी थी व बेहतर संसाधन उपलब्ध हुए थे। इसके बाद 12वीं योजना के बारे में बहुत उम्मीद जगी थी और प्रधानमंत्री ने कहा था कि जैसे 11वीं योजना में शिक्षा को उच्च प्राथमिकता मिली, वैसे ही 12वीं योजना में स्वास्थ्य को मिलेगी। पर सवाल यह है कि 11वीं योजना में आखिर शिक्षा में कितना सुधार हो सका है? कहीं ऐसा न हो कि 12वीं योजना के बाद स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी हमें यही सवाल पूछना पड़े।

12वीं योजना में सरकार से स्वास्थ्य के लिए बजट बढ़ाने की जो उम्मीद थी, उससे कहीं कम बजट बढ़ाया गया है। यह बजट सबके लिए स्वास्थ्य के लक्ष्य तक पहुंचने के लिए पर्याप्त नहीं है। तिस पर जिस तरह सरकार निजी क्षेत्र को स्वास्थ्य के क्षेत्र में प्राथमिकता दे रही है, भारी मुनाफाखोरी की प्रवृत्ति पर नियंत्रण नहीं लगा पा रही है, उससे तो यह आशंका होती है कि जितना बजट बढ़ा है उसका लाभ भी जरूरतमंदों तक नहीं पहुंच पाएगा।

जरूरी दवाओं की कीमतों के नियंत्रण को बहुत आवश्यक माना गया है व इस बारे में सर्वोच्च न्यायालय के अच्छे आदेश भी आए हैं। पर सरकार ने ऐसे आदेश के बावजूद असरदार कदम नहीं उठाए हैं, वह कीमत नियंत्रण के ऐसे उपायों में समय बर्बाद कर रही है जिससे वास्तविक प्रगति नहीं हो सकेगी। यदि जरूरी दवाओं का कीमत नियंत्रण नहीं हुआ तो सरकार व आम लोगों का बहुत–सा धन ऐसी दवाओं पर बर्बाद होता रहेगा जो अपेक्षाकृत कम कीमत पर उपलब्ध हो सकती है।

महानगरों में डॉक्टरों की कोई कमी नहीं है, पर उनकी सेवाएं जनसाधारण की पहुंच से बाहर होती जा रही हैं। छोटे शहरों व गांवों में डॉक्टरों व जरूरी साज–सामान की बहुत कमी है। सरकार इस कमी को पूरा नहीं कर पा रही है, बल्कि कुछ स्थानों पर तो सरकारी स्वास्थ्य सुविधाओं की स्थिति पहल से बिगड़ती जा रही है।

देश की अधिकांश जनसंख्या को अपने आवास के पास संतोषजनक इलाज उपलब्ध नहीं है। सरकार द्वारा स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध करवाने के लिए निजी क्षेत्र को अनेक सुविधाएं दी गई हैं, पर

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन व जननी सुरक्षा योजना शुरू होने के समय काफी उम्मीद जगी थी, पर अब यह उम्मीद कम होती जा रही है क्योंकि मिशन के क्रियान्वयन में भी गंभीर भ्रष्टाचार सामने आया है।

उसका उचित नियमन या रेगुलेशन नहीं किया है। इस कारण कई अनैतिक प्रवृत्तियां तेजी से बढ़ी हैं। यहां तक कि सरकार की लोक–लुभावन बीमा परियोजनाओं के धन का भी बहुत दुरुपयोग हो रहा है।

बीमे की तय राशि हड़पने के लिए अनावश्यक ऑपरेशन भी किए जा रहे हैं। यहां तक कि अनेक महिलाओं की बच्चेदानी बिना वजह निकालने के मामले भी सामने आए हैं। सरकारी व निजी क्षेत्र के अधिकारियों में सार्थक सहयोग के स्थान पर भ्रष्टाचार के संबंध बन रहे हैं। इस स्थिति में काफी सरकारी खर्च होने पर भी लोगों को राहत नहीं मिल रही है।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन व जननी सुरक्षा योजना शुरू होने के समय काफी उम्मीद जगी थी, पर अब यह उम्मीद कम होती जा रही है क्योंकि मिशन के क्रियान्वयन में भी गंभीर भ्रष्टाचार सामने आया है। एक तो जितने संसाधन जरूरी हैं वे मिलते नहीं है, जो मिलते भी हैं उनका बड़ा हिस्सा भ्रष्टाचार में चला जाता है।

यही वजह है कि गांव व कस्बे स्तर के स्वास्थ्य केंद्र बुनियादी सुविधाओं के अभाव में अपेक्षित भूमिका नहीं निभा पा रहे हैं। डॉक्टर ही नहीं, एएनएम तक शहरों में रहना चाहती हैं व गांवों में बहुत कम समय देती हैं, जबकि गांव में रहने वाली कार्यकर्ता 'आशा' से अन्याय हो रहा है। बहुत मेहनत करने के बावजूद उन्हें जो थोड़ी बहुत आर्थिक प्रोत्साहन राशि मिलनी होती है, वह भी समय पर नहीं मिलती है।

सरकार ने बहुत प्रचार किया है कि गर्भवती महिलाओं को सरकारी अस्पताल तक पहुंचना कितना जरूरी है, पर अस्पतालों में जरूरी सुविधाएं उपलब्ध नहीं होती है। यही वजह है कि मातृ व शिशु मृत्यु दर में जितनी कमी अब तक हो जानी चाहिए थी, उसमें सफलता नहीं मिल रही है।

सवाल है कि वास्तविक सुधार के लिए क्या किया जाए? चार कदम उठाने जरूरी हैं। पहली बात तो यह है कि सरकार, स्वास्थ्य का बजट और अधिक बढ़ाए तथा स्वास्थ्य क्षेत्र में प्रमुख जिम्मेदारी संभाले।

दूसरा जरूरी कदम है कि निजी क्षेत्र का उचित नियमन या रेगुलेशन हो। तीसरा महत्वपूर्ण कदम यह है कि सभी जरूरी जीवन–रक्षक दवाओं का कीमत–नियंत्रण असरदार ढंग से हो। साथ में स्वास्थ्य क्षेत्र में अधिक पारदर्शिता लाई जाए व हर क्षेत्र में जन–भागीदारी व स्वतंत्र, जनहित से जुड़े विशेषज्ञों की भागीदारी को प्रोत्साहित किया जाए।❑

बाजार बना चीन का हथियार

चीन की यह तरक्की भारत के लिए इस बात का संदेश है कि वैश्वीकरण के युग में सरकार की भूमिका उद्योग धंधों के लिए अब उत्प्रेरक की बन गयी है। दौलत आसमान से नहीं टपकती है। विज्ञान और तकनीक की सहायता से ही देश का विकास किया जा सकता है। लेकिन यह सोच और इच्छाशक्ति शायद हमारे देश के राजनेताओं और नौकरशाहों में नहीं है।

■ निरंकार सिंह

दुनिया में चीन आज जिस तेजी के साथ आगे बढ़ रहा है, उसकी मिसाल खोजनी मुश्किल है। अमेरिका भारत सहित शायद ही कोई ऐसा देश होगा जहां के बाजार में चीनी सामान न हो। हमारे यहाँ लैपटाप से लेकर पेन ड्राइव, टेलीविजन, मोबाइल इत्यादि इलेक्ट्रानिक्स के तमाम सामान, खिलौने, घड़ियां आदि कई तरह के सामानों पर 'मेड इन चायना' की मोहर दिखाई देती है। भारतीय बाजारों में तो गणेश लक्ष्मी की मूर्ति से लेकर रेडीमेड कपड़े और जूते चीन से बनकर आ रहे हैं। पुल का निर्माण हो अथवा टेलीफोन एक्सचेंज, बिजली घर हो अथवा अन्य प्रकार के ढांचागत निर्माण आज भारत में ही नहीं बल्कि दुनिया भर के देशों में चीनी कम्पनियां बड़े स्तर पर ठेके ले रही हैं। कुल मिलाकर आज विश्व बाजार पर चीन का दबदबा लगातार बढ़ता जा रहा है। आर्थिक मोर्चे की जंग ने एक नये प्रकार के युद्ध का क्षेत्र तैयार किया है। यह युद्ध अपनी तकनीक और कौशल के द्वारा दुनिया के बाजार पर कब्जा करने के लिए लड़ा जा रहा है। इस युद्ध में चीन ने दुनिया के तमाम देशों को पीछे छोड़ दिया है। चीन की इस तरक्की का राज क्या है। कैसे उसने दूसरे देशों के बाजार पर वर्चस्व कायम किया, यह जानना दिलचस्प होगा।

साठ साल पहले तक दुनिया में चीन के लोग अफीमची के रूप में जाने जाते थे। चीन की

अधिसंख्य जनता अफीम के नशे में डूबी रहती थी। लेकिन 1949 से 1976 तक चीनी क्रांति ने उसकी पूरी तस्वीर बदल दी। विदेशी नियंत्रण का शिकंजा तोड़ दिया। जमींदारों और नौकरशाह–पूंजीपतियों की सत्ता की नींव ध्वस्त कर दी गयी। देश का अपने संसाधनों के बल पर चौतरफा विकास हुआ। माओ के नेतृत्व में चीनी अर्थव्यवस्था का आत्मनिर्भर और संतुलित विकास हुआ। आधुनिक उद्योग का आधार खड़ा हो गया। समाज के सामूहिक श्रम द्वारा तैयार किये गये आधारभूत ढांचे के अंग के रूप में चीन को परिवहन के साधन और विद्युत के कारखाने हासिल हुए। उन्हीं की बदौलत देश की अर्थव्यवस्था का संतुलित विकास हो सका। लेकिन 1976 में नये शासकों ने देश की अर्थव्यवस्था को चरणबद्ध तरीके से विदेशी पूंजी के लिए खोल दिया और एक उन्नतशील आधुनिक चीन के निर्माण में जुट गये। आज चीन

कभी जापान का विदेशी मुद्रा भंडार सबसे बड़ा हुआ करता था। पर अब चीन ने जापान का स्थान ले लिया है। उसकी ज्यादातर विदेशी मुद्रा डालरों में ही है। उसने भारी मात्रा में अमरीकी सरकार की प्रतिभूतियां खरीद ली हैं, अमरीका की सरकारी संस्थाओं को ऋण दे रखा है और नाना प्रकार के वित्तीय उपकरणों में निवेश भी किया है।

के विकास की बागडोर साम्राज्यवादी वर्चस्व और आयातित टेक्नालाजी पर निर्भरता के दायरे में किसी हद तक राज्य के ही हाथ में है। इसी राज्य का एक लक्ष्य यह भी है कि विनिर्माण के क्षेत्र में देश लगातार विकसित से विकसित तकनीक अपनाता जाए।

चीन की अर्थव्यवस्था अमरीका, जापान, जर्मनी जैसे प्रमुख पूंजीवादी देशों को किये जाने वाले निर्यात पर भी आश्रित है। पिछले कुछ दशकों से चीन में जो पूंजीवाद आया और फला फूला वह इसी निर्भरता पर टिका रहा है। आज भी यही स्थिति कायम है। साथ ही साथ चीन के पास अपार श्रम शक्ति है। इसलिए यहां साम्राज्यवादी अपने निवेश से अधिक लाभ कमा पाते हैं। दुनिया भर के निवेशक भागे चले जाते हैं। यहीं चीन की अर्थव्यवस्था के तेज विकास का राज है। यह तेज विकास लगातार जारी रहा क्योंकि यहां के शासक अपनी सत्ता तथा पहलकदमी को मजबूत आधार पर कायम रखे हुए है। यही वजह है कि चीन का लगातार प्रभाव बढ़ा है और चीन की अर्थव्यवस्था आज दुनिया की दूसरी बड़ी अर्थव्यवस्था है। उससे बड़ी अर्थव्यवस्था केवल अमरीका की ही है। मगर जिस तेजी से चीनी अर्थव्यवस्था विकास कर रही है, उतनी तेजी से और कोई भी बड़ी अर्थव्यवस्था नहीं कर रही है। पिछले दो दशकों से उसकी सकल घरेलू उपज (जीडीपी) की विकास दर प्रतिवर्ष 10 फीसदी रही है। किसी भी साम्राज्यवादी देश की विकास दर प्रतिवर्ष 2–4 फीसदी से अधिक नहीं रही है। चीन की सकल घरेलू उपज यानि समूचे माल उत्पादन और सेवाओं का कुल मूल्य जितना 1990 में था 2005 तक आते आते वह दुगुना हो गया और आज ढाई गुना से ज्यादा है फिर भी चीन अभी गरीब देश ही है। प्रति व्यक्ति उत्पादन और प्रति व्यक्ति आमदनी इन दोनों ही मानदंडों से चीन दुनिया के प्रमुख पूंजीवादी देशों से कहीं अधिक पिछड़ा है।

परन्तु विकास दर और औद्योगीकरण के मानदंडों पर देखा जाए तो पिछले दो दशकों से लगातार चली आ रही तेजी की कोई दूसरी मिसाल विश्व पूंजीवाद के पूरे इतिहास में शायद ही मिले। आज चीन में उत्पादन क्षमता का असर बहुत ज्यादा उन्नत हो चुका है। इसका जबर्दस्त असर समूचे विश्व पूंजीवाद की मौजूदा विकास यात्रा पर पड़ रहा है। दुनिया में चीन तेजी के साथ आर्थिक शक्ति के रूप में उभर रहा है विनिर्माण क्षेत्र (मैन्यूफैक्चरिंग) में चीन दुनिया का केन्द्र बनता जा रहा है। पिछले कुछ वर्षो से जिन पांच प्रमुख देशों में सर्वाधिक विदेशी निवेश हुआ है, उनमें चीन भी है। विदेशी औद्योगिक निवेश तो चीन में सभी देशों से ज्यादा है। चीन की अर्थव्यवस्था आज विश्व साम्राज्यवादी अर्थव्यवस्था के विकास की गाड़ी का इंजन बनी हुई है। दुनिया भर के लोहे, इस्पात, एल्यूमिनियम और तांबे की 20–25 फीसदी खपत अकेले चीन में हो रही है। तेल की जों मांग आजकल बढ़ी हुई है उसका एक तिहाई हिस्सा चीन के कारण है। यह विदेशी पूंजी चीन में कई चीजों के उत्पादन में लगी हुई है। एक तो निम्न मूल के सस्ते सामानों के जैसे तैयार वस्त्र जैसे। जिसमें बहुत ज्यादा पूंजी लगी है। दूसरे किस्म का उत्पादन इलेक्ट्रानिक्स और इनफारमेशन टेक्नोलाजी के क्षेत्रों में हो रहा है। अमरीका को कम्प्यूटरों और कम्प्यूटर इलेक्ट्रानिक्स तथा इनफारमेशन टेक्नालॉजी के अन्य सामानों का निर्यात जितना चीन से होता है उतना अन्य किसी देश से नहीं होता। और इस निर्यातित माल का उत्पादन किस तरह किया जाता है? विदेशी मालिकों ने चीन के स्थानीय पूंजीपतियों को ठेके दे रखे हैं। विदेशों से ही उच्च स्तर की टेक्नालॉजी से निर्मित मुख्य–मुख्य पुर्जे, यंत्र आदि आयात किये जाते हैं। फिर चीनी ठेकेदारों की देख रेख इन्हें विदेशी मालिकाने वाले कारखानों में जोड़ तोड़ कर निर्यात के लिए तैयार किया जाता है।

पूरी तीसरी दुनिया में सर्वाधिक प्रत्यक्ष विदेशी निवेश चीन में ही है। चीन में अब भी पूंजी केन्द्रित वस्तुओं का उत्पादन अधिक हो रहा है। विकसित और मानवीकृत टेक्नालॉजी के सहारे मॉड्यूलर विनिर्माण ही अधिक हो रहा है। इसी प्रकार से हर क्षेत्र में विकसित तकनीक अपनाई जा रही है। चीन का शासक वर्ग प्रयासरत है कि उसका औद्योगिक–प्रौद्योगिक आधार विस्तार करता जाये और वैविध्यपूर्ण होता जाय। वह विकास के ढर्रे को अपने दूरगामी हितों के अनुरूप प्रभावित करना चाहता है। मिसाल के तौर पर कार उद्योग को देखें। चीन में कार निर्माण विदेशी पूंजी की सरपरस्ती में तेजी से विकसित हो रहा है। यह विकास फोक्सवागेन और जनरल मोटर्स कम्पनियों की सरपस्ती में हो रहा है। पर सरकार ने अपने बाजार में प्रवेश की शर्त और तौर पर इन पारराष्ट्रीय कम्पनियों से अभूतपूर्व पैमाने पर टेक्नालॉजी स्थानान्तरण निश्चित करवा लिया है। चीन के शासक इस बात के लिए अड़े हैं कि कार उद्योग में देशी कम्पनियां अपने साथ प्रतिस्पर्द्धा कर सकने वाली विदेशी साझीदार कम्पनियों के साथ साझे उद्यम कायम किये रखें। चीन अनुसंधान और विकास (आर एण्ड डी) में बड़े पैमाने पर और दूरगामी निवेश कर रहा है। इसकी बडी अहमियत है। देश की निजी और राजकीय कम्पनियों को सरकार यह

प्रोत्साहन दे रही है कि वे कम्प्यूटर और दूरसंचार जैसे औद्योगिक क्षेत्रों में देश के पैमाने पर रहनुमाई करे। चीन के शासकों का मकसद यह है कि वर्तमान विदेशी वर्चस्व वाले, साम्प्रदायवादी विकास का प्रयोग ऐसे आधार के रूप में करें जिसके बल पर चीन को विश्व के पैमाने पर आर्थिक शक्ति के रूप में मजबूती के साथ स्थापित करते हुए प्रचारित– प्रचारित और विस्तारित किया जा सके। इसी मकसद से चीनी शासक प्रयास जारी रखे हुए हैं।

चीन का यह जो तीव्र विकास हो रहा है, उस पर अभी तक विदेशी पूंजी का वर्चस्व कायम है और अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों पर निर्भरता भी विश्व के बाजार में जब भी मांग घटती–बढ़ती है, इसका असर तुरन्त चीन पर पड़ता है। चीन के लिए यह निहायत जरूरी हो जाता है कि विदेशी पूंजी को निरन्तर अपने यहां खींचते रहा जाय। साम्राज्यवादी पूंजी जब उत्पादन के खातिर हमेशा सस्ते से सस्ते क्षेत्रों को खोज रही हो, मैक्सिको से हटकर कभी चीन की ओर, तो कभी चीन से हटकर वियतनाम की ओर भाग रही हो, तो उसे आकर्षित करते रहने की जरूरत स्वतः स्पष्ट है। बड़े पैमाने पर चीन में पूंजीवाद के इस तीव्र विकास का सीधा प्रभाव पूर्वी एशिया पर पड़ता है। पूर्वी एशिया में पूंजीवादी उत्पादन के जिस क्षेत्रीय ताने–बाने को संगठित करने में जापानी साम्राज्यवाद प्रमुख भूमिका निभा रहा है, उसका स्वरूप अब चीनन केन्द्रित हो गया है। विनिर्माण के क्षेत्र में पूर्वी एशिया जैसा तीव्र विकास दुनिया के किसी भी दूसरे हिस्से में नहीं हो रहा है। समूचे पूर्वी एशिया में चीन के शासकों के आर्थिक–राजनीतिक सम्पर्को का जाल मजबूत होता जा रहा है। इस क्षेत्र में चीन एक सामरिक शक्ति के रूप में अपनी हैसियत दर्ज कराने के लिए आवश्यक क्षमताएं विकसित कर रही है। यहॉ से उसने दुनिया के शेष हिस्सों की ओर कदम बढ़ाना शुरू कर दिया है।

दुनिया के मुद्रा और वित्त बाजारों में अब चीन की अहम भूमिका बन गयी है। चीन का विदेशी मुद्रा भंडार तीन लाख करोड़ डालर तक पहुँच चुका है। उसने यह विदेशी मुद्रा अपने यहाँ उत्पादित माल के निर्यात के अलावा विदेशों में विभिन्न उद्योग–धंधों में अपनी पूंजी निवेश से कमाई है। चीन का निर्यात तंत्र वाकई लाजवाब है। स्वयं अमरीका भी चीन से जितना माल आयात करता है उतना और किसी देश से नहीं करता। कभी जापान का विदेशी मुद्रा भंडार सबसे बड़ा हुआ करता था। पर अब चीन ने जापान का स्थान ले लिया है। उसकी ज्यादातर विदेशी मुद्रा डालरों में ही है। उसने भारी मात्रा में अमरीकी सरकार की प्रतिभूतियां खरीद ली हैं, अमरीका की सरकारी संस्थाओं को ऋण दे रखा है और नाना प्रकार के वित्तीय उपकरणों में निवेश भी किया है। अपने डालरों के इस भंडार के कारण चीन ने विश्व साम्राज्यवादी व्यवस्था को प्रभावित करने का अच्छा–खासा सामर्थ्य अर्जित कर लिया है। चीन की यह तरक्की भारत के लिए इस बात का संदेश है कि वैश्वीकरण के युग में सरकार की भूमिका उद्योग धंधों के लिए अब उत्प्रेरक की बन गयी है। दौलत आसमान से नहीं टपकती है। विज्ञान और तकनीक की सहायता से ही देश का विकास किया जा सकता है। लेकिन यह सोच और इच्छाशक्ति शायद हमारे देश के राजनेताओं और नौकरशाहों में नहीं है। ❑

:: सूचना ::

स्वदेशी पत्रिका सम्राज्यवाद के खिलाफ एक सशक्त आवाज है। पत्रिका को ऐसे लोगों से प्रतिक्रियाएं, रिपोर्ट या आलेख की अपेक्षा है जो राष्ट्रहित में सोचते हैं और देश के स्वावलम्बन के लिए कुछ करने की इच्छा रखते है। जरूरी नहीं कि आप पत्रकार या लेखक ही हों, अपने आसपास से जुड़ी चीजों के प्रति आपकी संवदेना है और आप शब्दों में उसे लिख सकते है तो हमें अवश्य लिख भेजें। साथ ही स्वदेशी पत्रिका में छपे लेख आपको कैसे लगते हैं, क्या आप इसमें कुछ नए विषयों का समायोजन चाहते हैं कृपया हमें अवश्य अवगत कराएं। आपके विचारों को हम प्राथमिकता के साथ प्रकाशित करने का भी प्रयास करेंगे।

हमारा पता है :–

संपादक

स्वदेशी पत्रिका

'धर्मक्षेत्र', सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

आज सामान्य वर्ग के छात्रों को 20 प्रतिशत सीटें भी नहीं मिल पा रही है!

उच्च शिक्षा में असमानता

प्रवेश में इस प्रकार की गलत नीति गत निर्णयों से उच्च शिक्षा में युवाओं में अरुचि ही बढ़ेगी और उच्च शिक्षा की गुणवत्ता ही समाप्त हो जाएगी। उधर हमारे राजनेता सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा दिये गये निर्णय का अपमान करते हुए पदोन्नति में समाप्त किए आरक्षण को किसी न किसी प्रकार लागू करना ही चाह रहे है।

■ डॉ. सूर्यप्रकाश अग्रवाल

वर्ष 2012 के अगस्त माह में जिस प्रकार चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय मेरठ ने विभिन्न महाविद्यालयों में छात्रों के स्नातक स्तर पर प्रवेश के लिए मेरिट सूची बना कर भेजी उनमें सामान्य वर्ग के छात्रों को भारी हताशा व निराशा उठानी पडी है। उनके अंक अच्छे होने के बाबजूद उनकी सूची में जिस प्रकार ओबीसी व अनुसूचित जाति के छात्रों की घुसपैठ हो रही है उससे सामान्य वर्ग के छात्रों को बीस प्रतिशत सीटें भी विभिन्न कक्षाओं में नही मिल पा रही हैं। जबकि उनको 50 प्रतिशत सीटों पर प्रवेश मिलना चाहिए था। ऐसा तभी से हो रहा है जब से आरक्षण की व्यवस्था लागू की गई है। अब इस आरक्षण व्यवस्था पर पूनर्विचार होना चाहिए।

उदाहरण स्वरुप यदि हम सनातन धर्म महाविद्यालय मुजफ्फरनगर में सूचना पट्टों पर लगाई गई विभिन्न स्नातक स्तर की प्रथम वर्ष की कक्षाओं में प्रवेशार्थियों की सूची का गहराई से संख्यात्मक व विश्लेषणत्मक अध्ययन करें तो हम पायेगें की बी.ए. में कुल 580 सीटों में से 10 प्रतिशत अर्थात 60 सीटें, बी.काम. में कुल 298 में से 99 सीटें, बी.एस.सी. (गणित) की 60 में से 31 सीटें, बी.एस.सी (गृहविज्ञान) में 30 में से 7 सीटें, बी.एस.सी (बायो) में 60 में से 13, बी.एस.सी (सांख्यिकी) की 60 में से 9 सीटें दी गई हैं अर्थात कुल स्नातक स्तर पर प्रथम वर्ष में 1146 सीटों में से मात्र 219 सीटें अर्थात 19 प्रतिशत सीटें ही सामान्य वर्ग को मिल सकी है। ओबीसी व अनुसूचित जाति उन्हें 50 प्रतिशत के स्थान पर 81 प्रतिशत सीटें हासिल हो रही है। बी. ए. में ओबीसी व अनुसूचित जाति को 90 प्रतिशत, बी. कॉम. में 67 प्रतिशत, बी.एस.सी. (गणित) में 73 प्रतिशत, बी.एस.सी. (गृहविज्ञान) में

दोनों को मिला कर आरक्षण के नियम के तहत (27 व 23 प्रतिशत) अर्थात 50 प्रतिशत सीटें, मिलनी चाहिए थी। परन्तु 77 प्रतिशत, बी.एस.सी. (बायो) में 78 प्रतिशत, बी.एस.सी. (सांख्यिकी) में 85 प्रतिशत अर्थात कुल 1146 में से कुल 927

भारत के संविधान में दिए समता व समानता के अधिकार का यह कैसा मजाक उड़ाया जा रहा है? इससे तो छात्रों में द्वेष व वैमनस्यता ही फैलेगी। ओबीसी को 27 प्रतिशत का आरक्षण मंडल कमीशन के दौरान दिया गया था व अनुसूचित जाति व जन जाति को 23 प्रतिशत का आरक्षण डॉ. अम्बेडकर ने संविधान के लागू होने के 10 वर्ष के लिए ही दिया था जिसको अब राजनेता अपने राजनीतिक हित साधते हुए निरन्तर बढ़ाते–बढ़ाते अब स्वतंत्रता के 65 वर्ष तक ले आए हैं और अब वे इसकी समाप्ति पर सोचना भी अपने राजनीतिक हित पर कुठाराघात मानते हैं।

सीटें ओबीसी व अनुसूचित जाति को प्राप्त हुई है।

भारत के संविधान में दिये समता व समानता के अधिकार का यह कैसा मजाक उडाया जा रहा है? इससे तो छात्रों में द्वेष व वैमनस्यता ही फैलेगी। ओबीसी को 27 प्रतिशत का आरक्षण मंडल कमीशन के दौरान दिया गया था व अनुसूचित जाति व जन जाति को 23 प्रतिशत का आरक्षण डॉ. अम्बेडकर ने संविधान के लागू होने के 10 वर्ष के लिए ही दिया था जिसको अब राजनेता अपने राजनीतिक हित साधते हुए निरन्तर बढ़ाते बढ़ाते अब स्वतंत्रता के 65 वर्ष तक ले आये है और अब वे इसकी समाप्ति पर सोचना भी अपने राजनीतिक हित पर कुठाराघात मानते है और न ही आरक्षण की इस दोषपूर्ण व्यवस्था पर कोई समीक्षा करने के लिए ही तैयार हो रहे हैं।

कुल मिला कर आरक्षण 50 प्रतिशत ही दिया जाना चाहिए परन्तु मेरिट सूची इस प्रकार बनाई जाती है कि ओबीसी व अनुसूचित जाति के छात्रों को लाभ सीधे सीधे 80 प्रतिशत तक अथवा इसके ऊपर पंहुच जाता हैं। हमारे राजनेता जो समानता की दुहाई देते है क्या वे असमानता के इस उगते बीज की ओर ध्यान दे पायेगें?। अनुसूचित जाति के छात्रों से या तो शिक्षा शुल्क नाममात्र को लिया जाता है अथवा फिर सामान्य व ओबीसी वर्ग की शिक्षा शुल्क से चौथाई से भी कम फीस ली जाती है सो अलग। उन्हें छात्रवृति व सामाज कल्याण विभाग से आर्थिक सहायता मिलती है सो अलग।

जब छात्र कक्षाओं में साथ साथ बैठ कर पढते है तो इन विषमताओं की बातों से छात्रों के जहन में विषमता जरुर उत्पन्न होती होगी। विभिन्न कक्षाओं में प्रवेश में

आरक्षण के नियम को इस प्रकार बनाना चाहिए कि उससे प्रत्येक छात्र पढ़ाई व अध्ययन करने की ओर प्रेरित हो सके ना कि वह अपने जहन में विषमता का बीज लेकर महाविद्यालय को छोड़े।

आरक्षण कैटेगरी के अनुसार होना चाहिए जो छात्र ओबीसी कैटेगरी में प्रवेश चाहता है उसकी गणना 27 प्रतिशत में व जो छात्र अनुसूचित जाति की कैटेगरी में प्रवेश चाहता है उसकी गणना 23 प्रतिशत की सूची में होनी चाहिए और जो छात्र सामान्य कैटेगरी में प्रवेश चाहता है उनकी गणना 50 प्रतिशत में होनी चाहिए।

आरक्षण के नियम को इस प्रकार बनाना चाहिए कि उससे प्रत्येक छात्र पढ़ाई व अध्ययन करने की ओर प्रेरित हो सके ना कि वह अपने जहन में विषमता का बीज लेकर महाविद्यालय को छोड़े। आरक्षण की इस गलत नीति का ही यह प्रभाव देखने को मिल रहा है कि प्रत्येक कैटेगरी का छात्र प्रवेश लेने के उपरान्त कालेज में उसी समय दिखाई देता है जब परीक्षाओं का समय होता है अथवा छात्रवृति व आर्थिक सहायता का बंटवारा हो रहा होता है। वरना तो छात्र कक्षाओं में दिखाई ही नहीं देता हैं। इससे छात्रों में स्वाभिमान के बजाय भिक्षावृति व निकम्मापन की प्रवृति पनप रही है।

क्या समाज में समानता ऐसे ही आयेगी? क्या 65 साल के बाद भी सम्पूर्ण आरक्षण नीति की समीक्षा नहीं होनी चाहिए कि क्या इससे वह उदेदश्य प्राप्त हो भी रहा है अथवा नहीं जिसके लिए यह व्यवस्था लागू की गई थी?

कक्षाओं में छात्रो की भारी अनुपस्थिति को देख कर शिक्षक भी पढाने के प्रति हतोत्साहित हो जाता है तथा समाज शिक्षक को अकर्मण्ता का दोषी मानने लगता है। कक्षा में छात्र के अनुपस्थित रहने के पीछे प्रवेश में दिया जाने वाला दोषपूर्ण आरक्षण व्यवस्था अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है तभी स्नातक के बाद भी पर्याप्त ज्ञान व योग्यता न होने के कारण बडी संख्या में पढे लिखे स्नातक नौजवान बेरोजगारी की पंक्ति की शोभा बढा रहे होते है।

जो विद्यार्थी पढना चाहे व कालेज में आना चाहे उसी को प्रवेश देना चाहिए किसी भी लालच में कालेज में आने वाले छात्र को रोक देना चाहिए। विश्वविद्यालयों ने बी.ए., बी.काम व अन्य डिग्रीरियों के लिए प्राईवेट परीक्षा का रास्ता खोल ही रखा है। कम से कम कालेजों में प्रवेशार्थियों की भीड तो कुछ कम हो सकेगी और पढने वाले छात्रों से कक्षाऐं तो नियमित चल सकेगी।

प्रवेश में इस प्रकार की गलत नीति गत निर्णयों से उच्च शिक्षा में युवाओं में अरुचि ही बढेगी और उच्च शिक्षा की गुणवत्ता ही समाप्त हो जायेगी। उधर हमारे राजनेता सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा दिये गये निर्णय का अपमान करते हुए पदोन्नति में समाप्त किये आरक्षण को किसी न किसी प्रकार लागू करना ही चाह रहे है। क्या समाज में समानता ऐसे ही आयेगी? क्या 65 साल के बाद भी सम्पूर्ण आरक्षण नीति की समीक्षा नहीं होनी चाहिए कि क्या इससे वह उदेदश्य प्राप्त हो भी रहा है अथवा नहीं जिसके लिए यह व्यवस्था लागू की गई थी? ❑

(लेखक सनातन धर्म महाविद्यालय मुजफ्फरनगर में वाणिज्य संकाय में रीडर के पद पर कार्यरत है)

संवैधानिक व्यवस्थाओं से छेड़छाड़ देश के लिए खतरे की घंटी

सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के ऑडिट में कटौती का प्रावधान अर्थव्यवस्था के लिए घातक

जहाँ एक ओर केन्द्र सरकार आए दिन लेखा परीक्षकों द्वारा घोटालों के पर्दाफाश होने के डर से लेखा परीक्षण की संवैधानिक व्यवस्था में कटौती में तत्पर है। वहीं भ्रष्ट राजनीतिज्ञ और अधिकारी जो बैकों में लोगों की जमा पूँजी को अपनी जागीर समझते हुए इसे मनमाने ढंग से उपयोग करने के आदी हो रहे हैं और लेखा परीक्षण को अपने इस वर्चस्व पर खतरा मानते हैं।

■ सीए सुरिन्द्र आनन्द

महाघोटालों, भीषण भ्रष्टाचार, कमरतोड़ महंगाई, आर्थिक और अन्य नीतियों पर बुरी तरह नाकाम व घिरी हुई केन्द्र की यूपीए सरकार आए दिन संवैधानिक व्यवस्थायों से छेड़छाड़ में लगी हुई है। इसका ताजा उदाहरण है सरकार का भारत की स्वतंत्र व संवैधानिक लेखा परीक्षक एजेंसी 'कैग' (क्म्पट्रालर एण्ड ऑडिटर जनरल ऑफ इंडिया) पर तीखे प्रहार और उसके अधिकार क्षेत्र को सीमित करने की कुचेष्ठा।

पिछले दिनों कैग प्रमुख श्री विनोद राय ने हार्वड कैनेडी स्कूल में अपने सम्बोधन में सरकार पर गंभीर आरोप लगाते हुए यह संकेत भी दिए थे कि सरकार कैसे उनके अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप कर लेखा–परीक्षण की संवैधानिक व्यवस्था को नष्ट करने में लगी हुई है।

लेखा परीक्षण के अधिकार क्षेत्र को सीमित करने के अपने छुपे हुए एजेण्डों को आगे बढ़ाते हुए सरकार ने भारतीय रिजर्व बैंक, जो देश में सभी बैंकों को दिशा–निर्देश जारी करता है, के मार्फत सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को दिशा–निर्देश दिए हैं कि वर्ष 2012–13 के संवैधानिक ऑडिट के लिए लेखा परीक्षकों का पैनल केवल उन्हीं शाखाओं के लिए बनाया जाए जिनका कुल ऋण 20 करोड़ से अधिक है। पहले यह सीमा 3 करोड़ की थी। जिसको पिछले साल ही बढ़ाकर 6 करोड़ किया था औश्र इस वर्ष फिर से बढ़ाकर 20 करोड़ करने का सरकार के पास कोई तर्क नहीं।

देश भर में सरकारी बैकों की लगभग 101261 शाखाएँ हैं और उनमें से भी अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों व छोटे नगरों में हैं और केवल 18879 शाखाएं ही बड़े शहरों में हैं। ग्रामीण क्षेत्र व छोटे नगरों में कार्यरत सरकारी बैंकों की शाखाओं में ऋण तो नाममात्र ही होता है पर लोगों की जमा पूँजी अरबों–खरबों में होती है। अगर जालंधर की ही बात करें तो इस जिले के ग्रामीण क्षेत्र के सरकारी बैंकों की शाखाओं में 100 करोड़ से ऊपर की जमा–पूंजी एक सामान्य सी बात है जबकि ऋण स्तर 5 से 10 करोड़ के बीच ही होगा। अगर 20 करोड़ की सीमा वाला प्रावधान लागू हो जाता है तो 80 प्रतिशत से 90 प्रतिशत शाखाएँ ऑडिट प्रक्रिया से बाहर हो जाएंगी और लोगों के गढ़े–पसीने की कमाई का लगभग 590908 करोड़ रुपया जो ऐसी शाखाओं में जमा–पूँजी (फिक्सड डिपाजिट्स) के रूप में पड़ा है। वह भगवान भरोसे हो जाएगा और घपलों और घोटालों की संख्या में बेतहाशा वृद्धि होगी।

1969 में बैंकों का राष्ट्रीयकरण इसी उद्देश्य से किया गया था कि बैंकों में लोगों की मेहनत से अर्जित जमा–पूँजी सुरक्षित रहे, लाभ अर्जित करती रहे और इसे देश की अर्थव्यवस्था की प्रगति हेतु उद्योग–धंधों को उत्साहित करने हेतु और राष्ट्र के चहुँमुखी विकास हेतु ऋणों के रूप में वितरित कर के वार्षिक लेखा परीक्षण की व्यवस्था का प्रावधान निष्पक्ष एवं स्वतंत्र लेखा परीक्षकों जो कि संविधान द्वारा रचित इंस्टीच्यूट ऑफ चार्टर्ड अकाऊंटेंट्स ऑफ इंडिया से उच्च शिक्षा प्राप्त हों द्वारा करवाने का किया गया था ताकि समय रहते बैंकिंग प्रणाली की खामियों, अनियमितताओं एवं भ्रष्ट अधिकारियों द्वारा लगाया जा सके। लेखा परीक्षक पूरी निर्भीकता, निष्पक्षता, स्वतंत्रता एवं निपुणता से ऑडिट प्रक्रिया को अंजाम देते आ रहे हैं।

अभी पिछले वर्ष ही लेखा परीक्षकों ने लगभग 11167 करोड़ के खराब व बीमार (एनपीए) खातों को चिन्हित किया था जो कि वर्ष 2010 के 5729 करोड़ के लगभग दोगुणी है। देश में अब तक हुए अरबों के घोटालों और महाघोटालों का पर्दाफाश भी ऑडिट प्रक्रिया के दौरान लेखा परीक्षकों ने ही किया है चाहे बोफोर्स कांड हो या 2जी, कॉमनवेल्थ गेम्स, एयर इंडिया, एंट्रिक्स देवास, कोयला आवंटन सभी का पर्दाफाश ऑडिट्स ने पूरी निर्भीकता और स्वतंत्रता से किया है।

जहाँ एक ओर केन्द्र सरकार आए दिन लेखा परीक्षकों द्वारा घोटालों के पर्दाफाश होने के डर से लेखा परीक्षण की संवैधानिक व्यवस्था में कटौती में तत्पर है। वहीं भ्रष्ट राजनीतिज्ञ और अधिकारी जो बैकों में लोगों की जमा पूँजी को अपनी जागीर समझते हुए इसे मनमाने ढंग से उपयोग करने के आदी हो रहे हैं और लेखा परीक्षण को अपने इस वर्चस्व पर खतरा मानते हैं। ये लोग सरकार को और भारतीय रिजर्व बैंक को ऑडिट में कटौती के लिए प्रेरित करने हेतु बेतुके तर्क देते हैं। इन्हीं तर्कों में एक तर्क को प्राइवेट बैंकों की ऑडिट पद्धति को देते हैं जहां सम्पूर्ण बैंक का ऑडिट केन्द्रीय संवैधानिक लेखा परीक्षक कंपनी द्वारा किया जाता है। जो अपनी इच्छा और सुविधा अनुसार उस बैंक की शाखाओं का ऑडिट कर सम्पूर्ण बैंक की ऑडिट रिपोर्ट देते हैं। इस तर्क को सरकारी बैंकों की ऑडिट पद्धति बदलने का आधार नहीं बनाया जा सकता। चूँकि सरकारी बैंकों में

लोगों की जमा पूँजी पर सरकार की गारंटी होती है और अगर कोई सरकारी बैंक वित्तीय मुसीबत में आता है तो सरकार उसे लोगों के टैक्स से अर्जित धन में से तैयार बजट से वित्तीय सहायता उपलब्ध करवाती है।

दूसरा तर्क वो ये देते हैं कि क्योंकि अब अधिकतम सरकारी बैंकों में सम्पूर्ण कम्प्यूटरीकरण (सी.बी.एस. कोर बैंकिंग सॉल्यूशनस) प्रणाली लागू हो चुकी है और केन्द्रीय लेखा परीक्षक कम्पनी (5–7 चार्टर्ड अकाऊंटेंट्स वाली फर्म) बैंक के केंद्रीय कार्यालय से ही बैंक की सभी शाखाओं में होने वाले क्रिया–कलापों को कप्यूटर ट्रमिनल पर देख कर ही अपनी रिपोर्ट दे सकते हैं।

यह बड़ा ही विचित्र और बेतुका तर्क है कि एक तो बैंक की हजारों शाखाओं की हर प्रणाली का ऑडिट चंद लेखा परीक्षक बेहद सीमित समय में कर ही नहीं सकते। दूसरा कम्प्यूटर टर्मिनल से केवल खाता तो देखा जा सकता है पर बैंकों में पड़ी जमा पूँजीयों से संबंधित कागजात, प्राथमिक एवं समानान्तर संपत्तियाँ जैसे स्टाक, मशीनें, बिल्डिंग, घर, कारें व वाहन इत्यादि जिनके लिए ऋण दिए गए था जो सम्पत्तियाँ गिरवी रखी गई, बीमों से संबंधित कागजात इत्यादि का भौतिक परीक्षण सूद कम्प्यूटर टर्मिनल से नहीं किया ज सकता। बल्कि प्रत्येक शाखा में लेखा परीक्षक खुद जाकर ही परीक्षण कर सकते हैं। चंद बड़ी लेखा परीक्षक कंपनियां जिनमें 5–7 चार्डर्ट अकाऊंटेंट ही पार्टनर होते हैं को पूरी बैंक, जिसकी हजारों शाखाएँ पूरे देश में कार्यरत हैं, के लेखा परीक्षण देने से यह महज एक मजाक ही बन सकता है और भ्रष्टाचार को भी बढ़ावा आने की संभावना अधिक रहेगी।

ऑडिट के विकेन्द्रीयकरण से जहां ऑडिट की गुणवत्ता बढ़ती है वहीं बैंकों के अधिकारियों पर मानसिक एवं नैतिक अंकुश भी लगता है क्योंकि अनेक दिमाग में यह रहता है कि पता नहीं ऑडिटर क्या चैक कर लें और इसी नैतिक डर से वे गलत कामों से सहमें रहते हैं और बैंकिंग प्रणाली चुस्त दुरूस्त चलती रहती है।

कम्प्यूटर के आने जहाँ माऊस के एक क्लिक से करोड़ों रुपए इधर–उधर हो सकते है – वहाँ ऑडिट का दायरा बढ़ाने की जरूरत है। इन सब बातों से बेखबर सरकार आगामी लोकसभा चुनावों को ध्यान में रखकर अपने घोटालों पर पर्दे डालने हेतु ऑडिट की संवैधानिक व्यवस्था से खिलवाड़ कर रही है जो देश के लिए घातक कदम है। ❑

:: सदस्यता संबंधी सूचना ::

मान्यवर,,

स्वदेशी पत्रिका आज देश में चल रहे स्वदेशी आंदोलनों का स्थापित प्रतीक बन चुकी है। पिछले कई वर्षों से स्वदेशी पत्रिका ने असंगत एवं एकतरफा वैश्वीकरण, जनविरोधी आर्थिक उदारीकरण के विरोध एवं वैकल्पिक और रचनात्मक स्वदेशी आंदोलन के पक्ष में एक सक्रिय प्रहरी के नाते हमेशा आपको जागरूक बनाया है एवं आपसे संवाद स्थापित किया है। विगत कालखंड में इन सभी मुद्दों पर हमें आप जैसे सजग पाठकों का अपेक्षित सहयोग भी मिलता रहा है और भविष्य में भी मिलेगा ऐसा, विश्वास है।

आपसे आग्रह है कि स्वदेशी पत्रिका की आपकी सदस्यता अवधि यदि समाप्त हो गई हो तो कृपया पिछले समय से आगामी वर्ष तक की राशि धनादेश (मनीआर्डर), चेक एवं मांग पत्र (डिमांड ड्राफ्ट) के माध्यम से शीघ्र भेजने की कृपा करें। पत्रिका के लिफाफे के उपर चिपकाए गए पते की प्रथम पंक्ति में सदस्यता अवधि अंकित है। आप अपनी सदस्यता राशि ''स्वदेशी पत्रिका'' के नाम पत्रिका के कार्यालय के पते पर भेज सकते हैं। सदस्यता अद्यतन न हो पाने की स्थिति में वित्तीय कारणों से पत्रिका आगे जारी रखना कठिन होगा।

सदस्यता शुल्क निम्न प्रकार है :–

स्वदेशी पत्रिका	वार्षिक	आजीवन
हिन्दी	150 रुपए	1500/– रुपए
अंग्रेजी	150 रुपए	1500/– रुपए

हमें आपका सहयोग स्वदेशी आंदोलन को राष्ट्रव्यापी एवं जनोन्मुखी बनाने में प्रमुख भूमिका निभाएगा। कृपया स्वदेशी पत्रिका स्वयं भी पढ़ें एवं अन्य को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। पत्रिका के संबंध में अपना निष्पक्ष विचार हमें अवश्य भेजें।

पता : **स्वदेशी पत्रिका कार्यालय, 'धर्मक्षेत्र' शिव शक्ति मंदिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली–22**

रपट

देश के अंतर्गत जाति, धर्म और भाषा के नाम पर नागरिक सुविधाएँ और प्रशासन का निर्णय नहीं होना चाहिए

आज धर्म के नाम पर ये व्यवस्थाएँ दी जा रही है कल जाति के नाम पर दिया जाएगा। इस तरह के निर्णय से देश की एकता और अखंडता बनाये रखने में समस्या उत्पन्न हो जायेगी।

दिनांक 13 फरवरी 2013 को स्वदेशी जागरण मंच जमशेदपुर के द्वारा राज्य प्रशासन का पुतला दहन किया गया। यह पुतला दहन का कार्यक्रम सच्चर कमेटी की वह रिपोर्ट जिसमें मुस्लिम बहुल इलाके में मुस्लिम पदाधिकारी और कर्मचारी नियुक्त किये जाने संबंधित राज्य प्रशासन द्वारा निर्देश जारी करने के खिलाफ आयोजित किया गया।

स्वदेशी जागरण मंच का मानना है की राज्य प्रशासन का यह फैसला देश को धर्म के आधार पर बांटने जैसा है। राज्य प्रशासन ने जो निर्देश दिये है उसके अंर्तगत मुस्लिम बहुल इलाके में मुस्लिम पुलिस कर्मी तैनात करने, स्वास्थ केंद्र में मुस्लिम कर्मचारियों की पदस्थापना और राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ मिशन के तहत किये जाने वाले प्रचार और प्रसार में उर्दू में पंपलेट छपवाने इत्यादि के खिलाफ राज्य प्रशासन का पुतला दहन कार्यक्रम किया गया।

स्वदेशी जागरण मंच का स्पष्ट मानना है कि देश के अंतर्गत जाति, धर्म और भाषा के नाम पर नागरिक सुविधाएँ और प्रशासन का निर्णय नहीं होना चाहिए। आज धर्म के नाम पर ये व्यवस्थाएँ दी जा रही है कल जाति के नाम पर दिया जाएगा। इस तरह के निर्णय से देश की एकता और अखंडता बनाये रखने में समस्या उत्पन्न हो जायेगी।

पुतला दहन का कार्यक्रम सच्चर कमेटी की वह रिपोर्ट जिसमें मुस्लिम बहुल इलाके में मुस्लिम पदाधिकारी और कर्मचारी नियुक्त किये जाने संबंधित राज्य प्रशासन द्वारा निर्देश जारी करने के खिलाफ आयोजित किया गया।

याद रखना चाहिए कि एक बार अंग्रेजों ने भी इसी तरह के निर्णय के तहत अल्पसंख्यकों के लिए अलग निर्वाचन क्षेत्र करने जिसमें वोटर और प्रत्याशी दोनो अल्पसंख्यक होंगे दिया था, जिसके खिलाफ महात्मा गाँधी को अनशन करना पड़ा था और बाद में अंग्रेज सरकार ने वह निर्णय वापस लिया था। आज फिर वही स्थिति दिखाई देती प्रतीत हो रही है।

स्वदेशी जागरण मंच इस विरोध के माध्यम से महामहिम राज्यपाल और राज्य प्रशासन का ध्यान आकृष्ट कराना चाहती है कि इस तरह के निर्णय जो राज्य के साथ–साथ देश को बांटने वाला साबित होगा उसे अविलम्ब वापस लिया जाये तथा सच्चर कमेटी की रिर्पोट लागू न किया जाये। इस अवसर पर प्रमुख रूप से मंच के पूर्वोत्तर संघर्ष वाहिनी प्रमुख बंदेशंकर सिंह, मनोज कुमार सिंह, अभाविप के राष्ट्रीय जनजातीय छात्र प्रमुख प्रफुल्ल भाई, विक्रांत खंडेलवाल, सुमन कुमार, डा. राजीव कुमार, मंच के अनिल राय, राजकुमार साव, बिजय सिंह, सीपी सिंह, गौरव शंकर, गुरजीत सिंह, कौशाल किशोर, पंकज सिंह, रौशन सिंह, राकेश सिंह, देव कुमार, राकेश पांडे, परिषद के रवि कुमार सिंह, अमिताभ सेनापति, सुरा बिरूली, सोनू ठाकुर, सतनाम सिंह, प्रो. कमलेन्दु सहित बड़ी संख्या में मंच और परिषद के कार्यकर्ता उपस्थित थे। ❑

गृहमंत्री देश में सुरक्षा और शांति स्थापित करने में पूरी तरह फेल हैं

गृहमंत्री जैसे पद पर रहकर श्री शिंदे केवल राजनीति कर रहे हैं एक तरफ आतंकी खुलेआम चुनौती देकर बम विस्फोट करता है वहीं दूसरी तरफ श्री शिंदे केवल भागवा आतंक और हिन्दू आतंक की बात कर देश के अन्दर विद्वेष फैलाने का काम कर रहे हैं।

– राकेश कुमार पाण्डेय

दिनांक 22 फरवरी, 2013 को स्वदेशी जागरण मंच, जमशेदपुर के द्वारा साकची गोलचक्कर पर भारत सरकार के गृह मंत्री श्री सुशील कुमार शिंदे का पुतला दहन किया गया। यह पुतला दहन का कार्यक्रम हैदराबाद में हुए बम विस्फोट के खिलाफ था।

स्वदेशी जागरण मंच के पूर्वांचल संघर्ष वाहिनी प्रमुख श्री बंदेशंकर सिंह ने कहा कि जब दो दिन पहले पता हो गया था कि आतंकी बम विस्फोट कर सकते हैं और आतंकियों द्वारा जिस स्थान का नाम बम विस्फोट के लिये संभावित था उसी स्थान पर बम विस्फोट होना यह दर्शाता है कि गृहमंत्री इस देश में विधि व्यवस्था कायम करने में नाकाम रहे हैं। अतः उन्हें अपने पद से इस्तीफा दे देना चाहिए। राष्ट्रीय परिषद सदस्य मनोज कुमार सिंह ने कहा कि गृहमंत्री देश में सुरक्षा और शांति स्थापित करने में पूरी तरह फेल हैं अतः उन्हें तत्काल अपने पद से इस्तीफा दे देना चाहिए। आतंकियों द्वारा पहले बताकर बम विस्फोट करना सरकार को खुली चुनौती जैसा है। देश ऐसे गृहमंत्री के रहते सुरक्षित नहीं है।

जिला संयोजक राजकुमार साव ने भी गृहमंत्री के इस्तीफे की मांग की तथा बम विस्फोट की घटना के लिए केन्द्रीय गृहमंत्री को दोषी ठहराया।

राकेश कुमार पाण्डेय ने कहा की गृहमंत्री जैसे पद पर रहकर श्री शिंदे केवल राजनीति कर रहे हैं एक तरफ आतंकी खुलेआम चुनौती देकर बम विस्फोट करता है वहीं दूसरी तरफ श्री शिंदे केवल भागवा आतंक और हिन्दू आतंक की बात कर देश के अन्दर विद्वेष फैलाने का काम कर रहे हैं। इस अवसर पर विभाग संयोजक जेकेएम राजू ने भी अपने विचार रखे।

पुतला दहन कार्यक्रम में प्रमुख रूप से डा. अनिल राय, सीपी सिंह, विजय सिंह, पंकज सिंह, रामेश्वर प्रसाद, कौशल किशोर, अविषेक बजाज, राकेश सिंह, रौशन सिंह, गुरजीत यिंह, अमित मिश्र, अनिल तिवारी, अरविन्द तिवारी, संजीत प्रमाणिक, गौरव शंकर, राजपति देबी, मंजु ठाकुर, चंदना बनर्जी, देव कुमार, जयंत श्रीवास्तव, आरसी पाठक, अभय सिंह, सहित अन्य कार्यकर्ता उपस्थित थे।❑

कुंभ में लहराया स्वदेशी जागरण मंच का परचम

स्वदेशी जागरण मंच द्वारा दुनियां के सबसे बड़े इस महा आयोजन में उल्लेखनीय भूमिका रही। सेक्टर एक में लाल सड़क पर स्थापित मंच के विशाल शिविर में देश के विविध प्रान्तों के न सिर्फ सैकड़ों कार्यकर्ताओं को पनाह मिला, अपितु हजारों स्नानार्थियों को भी जन सहयोग से ठहरने और भोजन की व्यवस्था की गई।

इलाहाबाद का महाकुंभ 2013 सिर्फ धर्म और आस्था के नजरिये से ही महत्वपूर्ण नहीं था बल्कि सांस्कृतिक और सामाजिक एकजुटता के लिहाज से भी महत्वपूर्ण था। स्वदेशी जागरण मंच द्वारा दुनियां के सबसे बड़े इस महा आयोजन में उल्लेखनीय भूमिका रही।

सेक्टर एक में लाल सड़क पर स्थापित मंच के विशाल शिविर में देश के

विविध प्रान्तों के न सिर्फ सैकड़ों कार्यकर्ताओं को पनाह मिला, अपितु हजारों स्नानार्थियों को भी जन सहयोग से ठहरने और भोजन की व्यवस्था की गई।

बारह जनवरी को विवेकानंद की जयंती पर मंच की ओर से राष्ट्र चेतना और स्वामी विवेकानंद विषयक गोष्ठी के आयोजन और रात्रि भोज से शिविर की शुरुआत हुई और महाशिवरात्रि के स्नान के साथ समापन। गोष्ठी में पूर्व गृह राज्यमंत्री स्वामी चिन्मयानद,न्यायमूर्ति गिरिधर मालवीय, पूर्व मंत्री डॉ नरेन्द्र कुमार सिंह गौर और प्रोफेसर गिरीशचंद्र त्रिपाठी जैसे वक्ताओं ने हिस्सा लिया। शिविर में ग्लोबल वार्मिंग विषय पर आयोजित पोस्टर प्रदर्शनी का उद्घाटन आरो विश्वविद्यालय सूरत के कुलाधिपति हसमुख रामा और कुलपति प्रोफेसर कमलेश मिश्र ने किया।

मौनी अमावस्या को आयोजित भोज में आठ हजार से अधिक लोग शामिल हुए। दो माह के मेले में रविन्द्र राय शर्मा और जन सहयोग से लगभग पंद्रह हजार स्नानार्थियों को भोजन कराया गया। साथ ही पाच सौ सन्यासियों के बीच कम्बल वितरित किये गए। पंद्रह और सोलह फरवरी को राज्य सम्मेलन आयोजित किया गया। जिसमे राष्ट्रीय संयोजक माननीय अरुण ओझा, संगठक कश्मीरीलाल, गोविन्दाचार्य, उमा भारती, डॉ चन्द्रमोहन, डॉ राजीव, भोलानाथ मिश्र, योगेश शुक्ल, यशोवर्धन त्रिपाठी, डॉ नरेन्द्र कुमार सिंह गौर सहित कई महत्वपूर्ण लोग शामिल हुए। भारी बारिश और तूफान के बावजूद सम्मेलन संपन्न हुआ।

इक्कीस फरवरी को साईं भजन और प्रसाद वितरण का कार्यक्रम हुआ जिसमें लगभग दो हजार लोग शामिल हुए। दो माह तक लगातार चले शिविर में आंध्र प्रदेश ,उड़ीसा,मध्य प्रदेश ,छतीसगढ़, झारखण्ड, बिहार, पश्चिम बंगाल, उतराखंड, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, दिल्ली और गुजरात तक के सैकड़ों कार्यकर्ता ठहरे और महाकुंभ का पुण्य अर्जित किया।

इस महा आयोजन में शिविर के संयोजक राष्ट्रीय परिषद् सदस्य और काशी प्रान्त के सह संयोजक डॉ निरंजन सिंह, विचार मंडल प्रमुख डॉ विजय कुमार सिंह, इन्द्रसेन सिंह तोमर, महानगर संयोजक सुरेश बहादुर सिंह, कौशाम्बी के संयोजक हरिओम नारायण शुक्ल, प्रतापगढ़ के संयोजक राजकुमार शुक्ल का सराहनीय योगदान रहा। ❑

संघ लोक सेवा आयोग का फैसला भारत को पुनः अंग्रेजियत की गुलामी में ढकेल देगा

संघ लोक सेवा आयोग ने मुख्य परीक्षा में अंग्रेजी को अनिवार्य बनाकर भारतीय क्षेत्रीय भाषाओं की जरूरत खत्म कर दी हैं, इस निर्णय का अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद कड़े शब्दों में विरोध करती हैं। आयोग द्वारा संशोधित परीक्षा पाठ्यक्रम में अंग्रेजी की परीक्षा के नंबर अब मेरिट में भी जुडेंगे। पहले अंग्रेजी के साथ–साथ किसी एक भारतीय क्षेत्रीय भाषा में न्यूनतम अंक प्राप्त करना होता था और नंबर मेरिट में नहीं जुडते थे। आयोग के ताजा फैसले के बाद IAS, IPS, IES, IFS एव अन्य महत्वपूर्ण परिक्षाओं की प्रावीण्य सुची (मेरिट लिस्ट) में अंग्रेजी माध्यम में पढ़ने वालो को अतिरिक्त लाभ मिलेगा जबकि भारतीय भाषाओं से पढ़े लिखे छात्र पीछे रह जाएगें। अभाविप के राष्ट्रीय महामंत्री उमेश दत्त ने कहा की संघ लोक सेवा आयोग का ये कदम लॉर्ड मैकाले का सपना पूरा करने वाला साबित होगा, अंग्रेजी को अनिवार्य बनाने का षड्यंत्र तो इस केन्द्र सरकार के मन में कई वर्षो से हैं तथा यह फैसला भारत को पुनः अंग्रेजियत की गुलामी में पूरी तरह ढकेल देगा, इससे ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में भारतीय भाषाओं से संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षा की तैयारी करने वाले छात्रों के लिए जरूर ही परेशानी होगी। विद्यार्थी परिषद संघ लोक सेवा आयोग के इस फैसले से होने वाले संभावित परिणामों पर गंभीर चिंता व्यक्त करती हैं।

अभाविप ने चेतावनी दी है कि केन्द्र सरकार इस फैसले पर फिर से विचार करे तथा ग्रामीण भारत के छात्रों का भविष्य संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं में सुनिश्चित करें नही ंतो इसके विरुद्ध में हमें कठोर संघर्ष के लिए बाध्य होना पड़ेगा। ❑

६६